RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

रंगदार मोती

हिन्दू जाति की धार्मिक दुर्दशा, जातीय व्यवस्था और सामाजिक अवस्था का करुणाजनक दृश्य

—:o:—

सम्पादक—

नन्दू भाई

निज़ामाबाद (दक्षिण)

—:o:—

अ० स० सम्पादक—

देवीचरन मीतल

लेखराजनगर, अलीगढ़

—*—

प्रकाशक—

नन्दू भाई

'शिव साहित्य प्रकाशन मंडल,

पो० दयाल नगर, अलीगढ़।

सं० शाका १८८७ सर्वाधिकार सुरक्षित मूल्य २।।)६०

मुद्रक—रामस्वरूप 'राघव' राघव प्रिंटिंग प्रेस, अलीगढ़।

विषय सूची

अध्याय मुसहरों में धार्मिक

,, १—खलवली

,, २—धार्मिक ज्ञान वीन

,, ३—मुसहर कान्फ्रेंस

,, ४—मुसहरों का दूसरा जलसा

,, ५—गुरु की खोज

,, ६—गुरु के हाथ आने का प्रयत्न

,, ७—हलचल

,, ८—कलयुग आगया

,, ९—नरसिंहभान

,, १०—गायत्री

अध्याय शरीर और आत्मा

,, ११-का मिलाप

,, १२-मुसहरों का गुरु

,, १३-योगी का पहला व्याख्यान अहिंसा परमो धर्म्मः

,, १४-योगी का दूसरा व्याख्यान मित्रस्य चक्षुसा समीक्षा महे

,, १५-गायत्री की व्याख्या

,, १६-गायत्री मन्त्र के अंग

,, १७-मुसहर जाति में ब्राह्मण की शुद्धि

,, १८-प्रशंसा पत्र और उस का उत्तर

,, १९-विवाह

,, २०-विचित्र बातें

,, २१-नरसिंह भान की राम कहानी

अन्तिम परिणाम

R.S.

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देव महेश्वरः।
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मैः श्री गुरुवे नमः॥

सत्गुरु स्वरूप

राधास्वामी सतगुरु हितकारी (टेक)
राधास्वामी ब्रह्मा राधास्वामी विष्णू, राधास्वामी शिवकी मूरत
राधास्वामी पूरन ब्रह्म अखंडित पर ब्रह्म की सूरत॥ १॥
राधास्वामी सगुन अगुन राधास्वामी, राधास्वामी इनसे न्यारे।
राधास्वामी रक्षक राधास्वामी दानी राधास्वामी सत् रखवारे॥२।
सत् कबीर हैं राधास्वामी, नानक राधास्वामी जानूं।
राधास्वामी गुरु के एक रूप में, सब सन्तन को मानूँ। ३॥
राम कृष्ण और बुद्ध विवेकी, और सकल अवतारा।
राधास्वामी रूप में सबको समझूँ, यही सार का सारा॥४॥
राधास्वामी, सतगुरु प्रगटे कलि में, सुरत शब्द मत दीना।
राधास्वामी चरनशरन में आकर, जन्म सुफल कर लीना॥५॥

भूमिका

रङ्गदार मोती अपने रंग ढंग की दृष्टि से एक दम नया और अछूता नावेल है। इस में ग्रन्थकार ने हिन्दू जाति की सामाजिक अवस्था जातीय व्यवस्था और धार्मिक दुर्दशा का करुणाजनक दृश्य अति उत्तमता के साथ दिखलाया है जो पढ़ने वालों के हृदयों को हिला देता है। पढ़ते जाइये और आँसुओं की लड़ियाँ पुरोते जाइये।

गायत्री मंत्र क्या है! इसका सच्चा अर्थ क्या है! प्राचीन ऋषियों का क्या अभिप्राय था! अब अन समझी से लोग क्या समझ रहे हैं! इसका जाप कैसे और किस प्रकार करना चाहिये! इसकी संक्षेप व्याख्या संकेत के साथ इस में की गई है।

यह शिव के सिलसिले में तेरहवाँ नावेल है। इससे पहले जो नावेल निकल चुके हैं उनके नाम यह हैं:—(१) शाही पति परायण (२) शाही भूत (३) शाही डाकू (४) शाही लकड़हारा (५) शाही जादूगरनी (६) शाही भिकारी (७) आवदार मोती (८) तावदार मोती (९) ओ३म् नाविल (१०) झलकदार मोती (११) गिरहदार मोती (१२) शाहवार मोती। यह नावेल क्या हैं और कैसे हैं इसका पता केवल पढ़ने ही से लग सकता है! यह सब के सब शाही सिलसिले के नाविलों से कहीं बढ़ कर सर्व प्रिय होते जा रहे हैं।

आशा है जो लोग इस पुस्तक का अवलोकन करेंगे वह तत्व ग्राही बनकर ग्रन्थकार के श्रम को सफल करेंगे!

स० सम्पादक—

रंगदार मोती

पहिला अध्याय

मुसहरों में धार्मिक खलबली

राधास्वामी धाम (राज बनारस) के आस पास के बागों और जिला भदोही के लग भग सारे आम के बागों में एक जंगली जाति के लोग बसते हैं जो मुसहर के नाम से प्रसिद्ध हैं इनके घर नहीं होते या तो पृथ्वी में गढ़े खोद कर रहते हैं या अब फूस के छोटे तंग और नीचे झोपड़ों में रहने लगे हैं। यह लोग सीधे सादे होते हैं झूठ नहीं बोलते और निर्भयता इनका जातीय स्वभाव है बागों से लकड़ियाँ काट कर बेचते हैं और उसी से अपना पेट पालते हैं आश्चर्य की बात तो यह है कि चाहे बाग किसी के भी हों मुसहर इन्हें अपनी जायदाद समझते, लड़के लड़कियों के विवाह में दहेज में देते और महाजनों से रुपये लेकर रेहन भी करते रहते हैं। बाग के मालिक इनके इस रस्म को जानते भी हैं। वह हँस कर टाल देते हैं और कभी इनके काम में हाथ नहीं डालते। जिन लोगों को मुसहरों से सम्बन्ध नहीं रहा है उनकी समझ में यह बात नहीं आयेगी कि औरों के बागों के मालिक कैसे बने हुये रहते हैं कानून भी इनके इस रस्म में हस्तक्षेप नहीं करता। इस लिये यहाँ थोड़ा सा समझा दिया जाता है। यह इन बागों को दहेज में वैसे ही देते हैं और वैसे ही बय और रेहन करते हैं

जैसे शहरों के मेहतर चूड़े और हलाल खोर मुहल्लों का रेहन और बय करते हैं। जो मुहल्ला जिस मेहतर का है वहाँ दूसरा मेहतर कभी न जायेगा और जिसको यह दे देंगे केवल उसी को उसके कमाने का अधिकार रहेगा। यहाँ भी वही बात है। किसी ने नया बाग लगाया मुसहर पहुँचे और आपस में समझौता कर लिया कि आज से इस बाग का मालिक कौन है। जिसने उसे पाया वह उसे अपनी जायदाद समझने लगा जब तक वह किसी दूसरे मुसहर के हाथ बय या रेहन न करे उसके अधिकार को कोई धक्का नहीं पहुँचाता। यह बात के धनी और सच्चे होते हैं। कोई किसी की जायदाद को हाथ नहीं लगाता। इन की पंचायत बड़ी अच्छी होती है। सब कुछ आप ही निबट लेते हैं। जहाँ तक पता लगता है सैकड़ों वर्ष से इन का न कोई मुकदमा अदालत में गया और न पुलिस को इनके पास आने की नौबत आई।

यह नाम के लिये हिन्दू हैं। इनको पता तक नहीं है कि वह हिन्दू हैं या और कुछ हैं वह केवल इतना ही जानते हैं कि वह मुसहर हैं और बस!

किसी समय में यह देश इनके हाथ में रहा होगा और यह उसके राजा रहे होंगे। अब तो यह बहुत ही नीची जाति के समझे जाते हैं। सब का जूठा खाते हैं मर्द तो लकड़ियाँ बेचते हैं औरतें हिन्दूओं के यहाँ यज्ञ भोज में पत्तल दे आती हैं। पत्तलों पर जो जूठा बच जाता है उसे सब के सब खा पी लेते हैं। यही इनका काम काज और उद्यम है। यह किसी के बाग को हानि नहीं पहुँचाते। केवल सूखी और निकम्मी लकड़ियाँ काट कर बेचते रहते हैं इसी लिये बाग के मालिक भी इन से छेड़छाड़ नहीं करते। वह लोग तो यही चाहते रहते हैं कि मुस-

ग्रहण नहीं किया परन्तु उसके प्रभाव से अपने अपने धर्म की निखार में लग गये।

इन में से दस बीस राधास्वामी धाम के आस पास के रहने वाले जंगली मुसहर भी थे जिनके हृदय में सुधार की धुन समा गई। उस समय शुद्धि का प्रबन्ध नहीं था। स्वामी जी ने केवल पढ़े लिखे युवकों को जो ऊँची जाति के हिन्दू थे अपनी ओर आकर्षित करना चाहा था। नीची और अछूत जाति वालों को या तो उन्होंने जान बूझ कर छोड़ रक्खा था या उनको अपनी शिक्षा का अधिकारी नहीं समझा था। इन बेचारों का कोई भी पूछने वाला नहीं था। सब लोगों की दशा देखकर इन्हें भी स्वाभाविक रीति से अपनी भलाई की राह के खोजने की धुन सवार हो गई।

यह मुसहर किसी काम से मिरजा पुर गये हुये थे जहां स्वामी जी के धार्मिक व्याख्यान प्रायः हुआ करते थे। वहां उन्होंने एक नई पाठशाला भी खोली थी जिसमें लड़कों को संस्कृत पढ़ाया जाता था। अब वह नहीं है न उनका नाम वहां कोई जानता है, परन्तु उस समय कुछ दिनों तक इसका बहुत नाम हो चला था।

मिरजापुर शहर में इन जंगली मुसहरों के दिलों को ठेस लगी। यह लौट आये और पंचायत करके अपने धर्म के सुधार और परिवर्त्तन का भाव बूढ़ों और जवानों को देने लगे किसी ने इनकी हँसी उड़ाई। किसी ने इन से साहनुभूति प्रकट की। थोड़े ही दिनों में परिणाम यह हुआ कि इनमें धार्मिक खल-बली पड़ गई।

दूसरा अध्याय

धार्मिक ज्ञान बीन

धूम मच गई ! मुसहर और धर्म की खोज ! हिन्दुओं की ऊँची जातियों में द्वेष भाव बहुत है। यह नीची जाति वालों को पांव के नीचे दबाकर रखना सदैव से पसन्द करते हैं। एक प्रकार से यही इनका धर्म बन गया है। नाम के ब्राह्मण और क्षत्री इन पर फबतियां उड़ाने लगे। इन्हें इस बात का पता नहीं है कि बल नीची ही जाति के मनुष्यों में रहता है। यही जाति की इमारत की बुनियाद हैं और सब तो दर दीवार और छत की हैसियत रखते हैं। बूढ़े मुसहरों ने कुछ दिनों तक नवयुवकों के भाव की हँसी उड़ाई मानसिक धार में महान शक्ति है। केवल चित्त के एकाग्र होने की देर है। फिर इसकी शक्ति का ठिकाना नहीं रहता। जहां इसकी धार चल निकली फिर इसका सामना करना खेल नहीं है।

गोगा इन सब में बड़ा और समझ बूझ वाला था। जब हर जगह चर्चा होने लगी उसने एक दिन इन नवयुवकों को पास बिठा कर पूछा—"तुम क्या चाहते हो ?"

कोलाहल नवयुवकों का सरदार था। उसने कहा—"पूजा करने का ढंग बदल दिया जाय।"

गोगा—"क्यों ?"

दुर्जन (दूसरा नव युवक)—"माई बापू ! भाई बापू ! चिल्ला चिल्ला कर कहना कोई पूजा तो नहीं है।"

गोगा—"हमारे बाप दादा सनातन से ऐसा ही करते चले आये हैं। हमको भी ऐसा ही करना चाहिये।"

हर उनके बागों में झोपड़े बना कर रहें। इस से उनके बाग की रक्षा मुफ्त में हो जाती है साबित और अच्छी लकड़ी को यह हाथ नहीं लगाते। वह मालिक की जायदाद है। इनका अधिकार केवल सूखी और बेकार लकड़ियों पर है जिसे वह ईंधन के लियें बेचा करते हैं।

इस मुसहर जाति की दो शाखायें हैं। बड़ी शाखा तो मुसहर कहलाती है और छोटी शाखा का नाम केवट है। मुसहर तो जंगली के जंगली रह गये। केवटों को जमाने की हवा लगी। वह अपनी पहिली शाखा से एक दम अलग थलग दिखलाई देते हैं। मुसहर तो सब का जूठा खाते पीते हैं केवटों की यह दशा है कि वह ब्राह्मण तक के हाथ का छुआ पानी नहीं पीते। यह खेती बाड़ी का काम करते हैं।

अब भी यह दोनों बड़े और छोटे भाई कहलाते हैं इनका आपस में मेल नहीं है न इन में कोई सम्बन्ध ही होता है। केवट तो घर बनाते हैं और गाँव में आबाद हैं। मुसहर अब तक जंगली ही रह गये। इन की बोल चाल भी सब साधारण से भिन्न है फिर भी एक बात देखी जाती है कि जब कोई केवट किसी मुसहर को भाई कहकर पुकारता है तो यह मदमाद होकर फूले नहीं समाते। सुना गया है कि जब किसी केवट पर ज़मींदार ने अत्याचार किया और उसने पुकारा "चलो बड़े भाई! सहायता का समय आगया है" फिर क्या है मुसहर जाति का एक २ बच्चा उठ खड़ा होगा और उस केवट के लिये प्राण तक न्योछावर कर देगा। केवटों में मुसहरों के लिये यह सहानुभूति नहीं। वह इन्हें तुच्छ समझ कर नीची दृष्टि से देखते हैं।

मुसहर शब्द का इतिहास क्या है! इसका कोई पता नहीं

है। लोगों का विचार है कि यह मूषा या चूहा खाते हैं इसलिये उनका ऐसा नाम है और इस बात में कुछ सचचाई भी पाई जाती है। यह चूहों की खोज में बहुत रहते हैं और उन्हें भून कर बड़े स्वाद से खाते हैं। इस दृष्टि से यह नाम फबता तो है परन्तु यह पुराना नाम नहीं है, नया जान पड़ता है। इनकी जाति तो बहुत पुरानी है इसमें कोई संदेह नहीं है। चूहों पर क्या है। यह लगभग सभी माँस भून कर चट कर जाते हैं। साँप और नेवले तक को नहीं छोड़ते। इसी लिये इनके शरीर से एक विशेष प्रकार की दुर्गन्ध निकलती रहती है। जानवर तक इस दुर्गन्ध से घृणा करते हैं। यहाँ के गाँव में यह रिवाज है कि जब घरों की चारपाइयों और खाटों में खटमल भर जाते हैं और किसी युक्ति से दूर नहीं होते तो लोग पैसे देकर मुसहरों को उन पर लिटा देते हैं। फिर तो यह खटमल एक एक करके उन से भाग निकलते हैं। सर्दी गर्मी इन्हें नाम को नहीं लगती। बरसात हो, जाड़ा हो यह खुले हुये मैदान में पड़े रहेंगे आश्चर्य की बात तो यह है कि मच्छर तक इन्हें नहीं काटते न कोई जानवर इन्हें डसते हुये सुना गया। यह भी विचित्र बात है। यह बारह महीने नंगी जमीन पर पड़े रहते हैं और गर्मी सर्दी सब कुछ सह लेते है। इन्हें कोई कीड़ा मकोड़ा नहीं काटता। वह भी इनकी दुर्गन्ध से घबराते होंगे।

इन मुसहरों का धर्म भी कम आश्चर्य जनक नहीं है। यह ईश्वर आदि को न जानते हैं न समझते हैं न देवी देवता पर विश्वास रखते हैं यह एक प्रकार की पित्र पूजा करते हैं। यही इनका धर्म है। जब दशहरा या कुआर की नवरात्रि आती है। यह दस दिन तक बराबर अपनी पूजा करते रहते हैं। सब मर्द औरत लड़के वाले इकट्ठा बैठते हैं। कोई बाजे बजाता है कोई

गांजे की चिलम भर कर सामने रख देता है। फिर "माई बापू" "माई बाप" की सुहानी ध्वनि होने लगती है यही इनकी स्तुति और मन्त्र जाप समझो। किसी किसी पर इनके माँ बाप की रुह उतर आती है। इसीसे प्रश्न करते हैं और वह जो जवाब देता है उसी को यह पत्थर की लकीर समझते हैं। पूजा करने के पीछे यह सूअर का बच्चा मारते हैं उसका माँस खाते हैं और आनन्द मानते हैं गाँजा चरस बहुत पीते हैं परिश्रमी भी कम नहीं होते जहाँ तक पता चलता है थकावट छुड़ाने ही के लिये यह गांजा चरस का दम लगाते हैं।

यह इस सीधी सादी जाति की सीधी सादी राम कहानी है। पढ़ने लिखने की इन्हें हवा तक नहीं लगी। जैसे यह पहिले रहे होंगे वैसे ही अब भी हैं। जिस समय इनका राज्य रहा होगा पता नहीं इनकी क्या दशा थी। किसी इतिहास से भी इसका पता नहीं चलता परन्तु यह जंगली ही रहे होंगे। हिन्दू आर्य्य उत्तराखण्ड से आये। इन का माल असबाब राज पाट छीन लिया और धक्के देकर नीचे गिरा दिया! यह केवल नाम रूप के मनुष्य हैं और बातों में तो जानवरों से भी बढ़े हुये हैं।

संसार में जब कभी विचार की लहरें उमड़ती हैं तो उनका प्रभाव हर जगह पड़ता है और सब को उसका लोहा मानना ही पड़ता है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी संसार में प्रकट हुये धार्मिक दृष्टि से हिन्दुओं की काया पलट करनी चाही। बहुत से हिंदू अपने सनातन धर्म को छोड़ कर उनके अनुयायी बन गये। इस विचार की लहर ऐसी फैली कि शहर शहर गाँव गाँव और कस्बों कस्बों में इसकी चर्चा होने लगी। मनुष्य स्वभा-

किस रीति से नई नई बातों को पसन्द करता है। बहुत से लोग नई बातों की ओर झुकते हैं यही दशा बहुत से हिन्दुओं की हुई। स्वामी जी महाराज ने सारे धर्मों की बुराइयां कुछ इस प्रकार दिखलाईं कि उन लोगों में खलबली सी पड़ गई। मन चले नवयुवक पुराने ढकोसलों को छोड़ कर इनके समाज में आने लगे। यह हवा एक सिरे से दूसरे सिरे तक सारे हिन्दुस्तान में फैल गई। हिन्दुस्तान धर्मों का अजायब खाना है। संसार के और देशों की यह दशा नहीं है यहाँ जैसे जैसे मानुषी भावों की दृष्टि से धर्मों की गढ़त हुई थी वह सारी बातें अब तक किसी न किसी रूप में वर्त्तमान हैं। कोई किसी वस्तु को धार्मिक दृष्टि से पवित्र समझता है कोई किसी को। एक ओर पितृ पूजा के रूप में अपने पूर्वजों के आत्मा को बलवान समझ कर उनकी पूजा में लगे रहते हैं दूसरी ओर अद्वैत वादी वेदाँती हैं जो आत्मा के अतिरिक्त और किसी वस्तु को नहीं मानते। वृक्ष पत्ते फूल तत्व, पशु, नदी नाले पहाड़ टीले खंडर, मर्घट जंगल मैदान तक के पूजने वाले यहाँ अब तक मिलते हैं। यह कमी के साथ नहीं किन्तु अधिकता के साथ हर जगह पाये जाते हैं। किसी ने किसी जगह दो चार ईंट रोड़े या कंकड़ पत्थर रख लिये और उन्हीं के सामने सर झुकाने लगे। स्वामी दयानन्द जी के नये विचारों का समुद्र जब लहराने लगा यह सब मतावलम्बी उस के प्रभाव के नीचे आगये। इनमें से चुने चुने लोग तो छटछट कर स्वामी जी के पन्थ में आ गये और लोगों को सोचने विचारने का अवसर मिल गया कि जब सैकड़ों और हजारों वर्ष से उनके धर्म का सिलसिला बिना रोक टोक चला आता है तो उसमें भी सचाई अवश्य होगी उन्होंने नये विचार को

कालू (तीसरा नवयुवक)—"हमारे बाप दादा जंगली थे। वह धर्म कर्म की समझ नहीं रखते थे हम समझ बूझ रखते हुये लकीर के फकीर क्यों बने रहे।"

गोगा--"फिर चाहते क्या हो?"

दुर्जन--"चाहते क्या हैं! यही चाहते हैं कि जैसे बड़ी और ऊँची जाति के हिन्दू अच्छे और ऊँचे धर्म के अनुयायी हैं हम भी उसी को ग्रहण करें।"

गोगा हँसा—"बड़ों की बड़ी बातें! छोटों की छोटी बातें। जो जैसा और जिस हैसियत में है उसके लिये उसी हैसियत में रहना अच्छा है नहीं तो उपद्रव मचेगा और लोग द्वेष ईर्षा में पड़कर लड़ाई झगड़े मोल लेंगे। हम लोग सैकड़ों साल से अपना सीधा सादा धर्म पालते चले आ रहे हैं और कोई हम से छेड़ छाड़ नहीं करता। यदि ऊँची जाति वालों के धर्म की रीस करेंगे तो वह हमारे पीछे पड़ जायेंगे।

कोलाहल बोला—'वृद्धि और उन्नति का नाम जीवन है। यह बिना परिश्रम और हाथा पाई के हाथ नहीं आती। यदि लड़ाई होती है तो होने दो। उसकी क्या परवाह है! हम अब उन्नति किये बिना रुक नहीं सकते।"

गोगा—"संसार में उन्नति के लाखों ढंग हैं—धन, द्रव्य, मान, प्रतिष्ठा, बल बुद्धि। उन्नति का अधार केवल धर्म ही तो नहीं है। इस धर्म से बड़े बड़े झगड़े और दंगे मच जाते हैं। देखो! यह ऊँची जाति वाले हिन्दू धर्म के फेर में पड़ कर किस प्रकार एक दूसरे के साथ द्वेष और घृणा रखते हैं।

कोलाहल—बुराई भलाई साथ साथ चलती हैं।"

गोगा—इस दृष्टि से भी हमारा धर्म ऊँची जाति वालों के धर्म से अच्छा और सादा है।

दुर्जन - "वैसे और किस प्रकार ?"

गोगा..."हमलोग सनातन से अपने बाप दादा के आत्माओं को पूजते चले आ रहे हैं। ऊँची जाति वाले कल्पित ईश्वर को पूजते हैं। जिसे न कभी देखा न सुना और जिसके विषय में उनका विश्वास भी दृढ़ नहीं होता।"

कोलाहल--"परन्तु हमारे बाप दादा बराबर जीते नहीं रहते। उनके ईश्वर के विषय में कहा जाता है कि वह कभी नहीं मरता-सदैव से है और सदैव रहेगा। यदि वास्तव में ऐसा कोई ईश्वर है तो वह बड़ा बलवान होगा और हमारी सहायता करेगा।"

गोगा—"भाव तो ऐसा ही है और यह लोग ऐसा ही मानते हैं परन्तु न तो कहीं इसका प्रमाण है और न आज तक वह किसी को मिला। रह गये बाप दादा वह जब मर जाते हैं नाश नहीं होते। उनका आत्मा सदैव बना रहता है। इस लिये हमारा धर्म ऊची जाति वालों के धर्म से कहीं बढ़ चढ़ कर है।

दुर्जन—"इसका क्या प्रमाण है कि वह नाश नहीं होते ?"

गोगा—"देखो। कुआर के नवरात्र की पूजा के दिनों में जब हम स्मरण करते हैं वह किसी न किसी के सर पर आकर बोलने लगते हैं और वह खेलने लग जाता है! जो कुछ पूछो उसका उत्तर देता है। यह प्रमाण है कि वह मिटे नहीं हैं। ऊँची जाति वालों का ईश्वर न कभी किसी पर प्रकट हुआ और न उसने किसी के प्रश्नों का उत्तर दिया। इस से सिद्ध होता है कि उनका ईश्वर केवल ढकोसला है।

कोलाहल—"ऊँची जाति वाले कहते हैं कि आत्मा फिर शरीर धारण करता है और बराबर जन्मता मरता रहता है"

गोगा—"कौन जाने इस में कहाँ तक सच्चाई है परन्तु हम लोग इसे सच नहीं मानते। जान पड़ता है ऊँची जाति वालों ने तुमको भ्रम में डाल दिया है। और तुम भ्रम में आकर धोखा खा रहे हो।"

दुर्जन – "ऊँची जाति वाले तो हमको कुत्ते बिल्ली और सूअर से भी कहीं अपवित्र समझते हैं। जब वह हमें छूते तक नहीं तो वह कैसे भ्रम में डालने लगे! वह तो हमें पशुओं से भी गिरा समझते हैं।"

गोगा फिर यह धर्म कर्म का विचार तुम्हारे मन में कैसे उत्पन्न हुआ?"

कोलाहल-- 'हम मिरजापुर गये थे। वहाँ ऊँची जाति वालों का एक गुरु आया हुआ है। उसका नाम स्वामी दयानन्द है। वह अच्छा महात्मा है। हम उसके देखने के लिये गये हुये थे। उसने हमसे प्रेम के साथ बात चीत की और हम से कहा:—

सारे जगत का ईश्वर एक ही है। उसी ने सबको बनाया सब का एक ही धर्म है और किसी से छूत छात न करना चाहिये हमने इस देवता जैसा मनुष्य ऊँची जाति वालों में नहीं देखा वह सच्चा जान पड़ता है। उसकी बातें मन में घर कर लेती हैं। फिर हमको भी इच्छा हुई कि हम भी स्वामी दयानन्द का धर्म ग्रहण करें।"

गोगा-- 'स्वामी दयानन्द अच्छे मनुष्य होंगे क्योंकि अच्छे ही लोग अच्छी बातें कहते हैं परन्तु यह ऊँची जाति वाले कैसे अच्छे होंगे। यह हम से घृणा करते हैं। घृणा बुरी बात है। जब इनका मन अपवित्र और बुरा है तब ही तो बुरी बातें उनसे निकलती हैं। यह बुराई उनको किसने सिखाई? इनके धर्म ने इनको बना रक्खा है। इस लिये ऊँची जाति वालों का धर्म ग्रहण नहीं करना चाहिये।" इसकी बातों

में सचाई थी। वृक्ष सदैव अपने फल से पहचाना जाता है। हमारे नवयुवक मुसद्दर थोड़ी देर के लिये सोचने लगे।

कोलाहल—"स्वामी दयानन्द जी कहते हैं कि ऊँचा धर्म तो सच्चा और अच्छा है। ऊँची जाति वालों की समझ छोटी और बुरी है। उन्होंने कुछ का कुछ समझ रक्खा है और बात कुछ ही कुछ है।"

गोगा—"स्वामी दयानन्द जवान हैं या बूढ़े ?"

दुर्जन—"न जवान हैं न बूढ़े हैं वह अधेड़ हैं।

गोगा मनही मन कुछ सोचने लगा।

कोलाहल—'यह बात तुमने क्यों पूछी थी ?"

गोगा—'जवानों में जल्दी के साथ अनसमझी होती है, वह दूरदर्शिता से काम न लेकर बेतुकी बातें करते और कहते हैं। बूढ़े सोच विचार वाले होते हैं वह बिना सोचे समझे मुँह नहीं खोलते। लोग कहा करते हैं कि बूढ़े को पिटारे में बन्द करके साथ रखना चाहिये।'

दुर्जन—"हमने यह कहावत नहीं सुनी है। इसका अर्थ क्या है।"

गोगा—"सुनो मैं सुनाता हूँ:—पहले समय में जब राजपूतों का विवाह होता था घराती बराती दोनों एक दूसरे को नये नये ढंग से तंग किया करते थे। यह बात हँसी दिल्लगी के रूप में अब तक चली आती है किसी राजपूत का विवाह अच्छे घर में ठीक हुआ। लड़की वालों ने कहला दिया कि बारात में सब जवान ही जवान आयें, यदि एक भी बूढ़ा आया तो विवाह न होगा। यह बात मान ली गई। जब बारात चलने को हुई एक बुद्धिमान मनुष्य ने नवयुवकों से कहा तुम

सब के सब लड़के हो किसी न किसी बूढ़े को अवश्य ले जावो नहीं तो धोखा खावोगे ' जवानों ने बूढ़ों की लेजाने की युक्ति पूछी। उसने समझाया - 'पिटारे में बन्द करके ले जाओ, जब आवश्यकता हो काम की बात पूछ लिया करना।' ऐसा ही हुआ। बारात गाँव में पहुँची ! लड़की वालों ने कहला भेजा यदि बारात ठीक ठीक हमारे द्वार पर आयेगी तो विवाह होगा नहीं तो उलटे पाँव लौट जाना होगा। नवयुवक बराती घबराये क्योंकि विवाह तो एक ही में था परन्तु सारे गाँव वालों ने अपने घरों को एक ढंग पर सजा रक्खा था और सब के घरों के सामने मंडप बने हुये थे। एक नवयुवक ने घबरा कर पिटरे वाले बूढ़े से कठिनाई कह सुनाई। उसने कहा— 'घबराव नहीं, छोटे लड़कों को मिठइयाँ खिलाओ। वह बारात को विवाह वाले घर के सामने लेजाकर खड़ा कर देंगे।' सब ने ऐसा किया और कठिनाई दूर हो गई। फिर घरातियों ने वागचार के पीछे पाँच सौ बकरे पाँच सौ बरातियों के लिये भेज कर कहला भेजा— एक एक बराती एक एक बकरा खा जाय तब तो विवाह होगा नहीं तो लौट जाना पड़ेगा।' लोगों ने फिर पिटारे वाले बूढ़े से युक्ति पूछी। उसने कहा—'एक बकरा मार आग में भूनो और सब साथ मिल बैठो और नोच नाच कर उसका कबाब खा जाओ और फिर बारी २ से ऐसा ही करते चलो।' नव युवकों ने बात मान ली और उन की आपत्ति टल गई। इसी प्रकार वह हर बात में बूढ़े से सम्मति लेते रहे और आनन्द के साथ विवाह करके घर लौट आये। उस समय से पिटारे में बूढ़े के बन्द करने की कहावत फैल गई।'

इस देहाती कहानी को सुनकर हँसते हँसते लोगों के पेट

में बल पड़ गये। कोलाहल ने कहा—"तब ही तो हम लोग तुम्हारे पास आये।"

दुर्जन—"हम लोगों में तुमसे बूढ़ा नहीं है।"

कालू—"अब तुम बताओ क्या किया जाय?"

गोगा—'सुनो! कुशल इसी में है कि चुप चाप अपने धर्म का पालन करो। जो एक बात पर डटे रहते हैं वह नाश नहीं होते। जो न नई बातों पर जान देते रहते हैं वह थोड़े ही दिनों में मिट मिटाकर नाश हो जाते हैं। स्थूल वस्तु कुछ दिनों तक एक दशा में रहती है और सूक्ष्म भाप बन बन कर उड़ जाती है। स्थूलता की जगह स्थूलता ही काम देती है। यहाँ सूक्ष्मता काम नहीं आती परन्तु तुम्हें तो जमाने की हवा लग गई। एक संस्कार मिल गया और वह संस्कार अपना प्रभाव अपने साथ रखता है। इसमें महान शक्ति है। जब तक यह संस्कार काम नहीं कर लेता तब तक यह चैन नहीं लेने देता। पता लगता है कि अब मुसहरों को भी पढ़ लिख कर बाबू बनाना है। यह बाबू बन कर रहेंगे इसने कोई इन्हें रोक नहीं सकता और न वह आप रुकने वाले हैं। मैं इसे समझ गया। अब रही यह बात कि तुमको किस प्रकार काम करना चाहिये इनका सम्बन्ध सोच विचार से है।"

कालू—'अब यही सम्मति दो कि हम किसी धर्म के अनुयायी बनकर अपनी भलाई की राह आप निकालें।

गोगा-'सुनो-अनुभव कहता है कि ऊँची जाति वालों के धर्म ग्रहण करने में तुम्हारी भलाई एक दम नहीं है। यह नीची जाति वालों को अपने पांव की जूती समझते हैं। इनके छूतछात का पाखंड इतना बढ़ा हुआ है कि इनके धर्म के ग्रहण करने से तुम और भी दस गज नीचे दब जावगे। यह तुमको कभी उभरने

न देंगे। यह सैकड़ों वर्षों का अनुभव है। अब रही यह बात कि स्वामी दयानन्द का धर्म कहाँ तक तुम्हारे लिये उपयोगी हो सकता है इसका मुझे न पता है न अनुभव है। हां इतना मैं कह सकता हूँ कि यदि उसमें ऊँची जाति वाले हिन्दू अधिकता के साथ सम्मलित हो गये हैं तो यह छेड़ छाड़ किये बिना न रहेंगे। न यह तुमको अपने में मिला सकेंगे और न कभी ऐसा करेंगे जाति अभिमान के मद में चूर रह कर यह तुम्हें अपने पांव से कुचल डालेंगे। इस लिये तुमको ऐसे धर्म की शरणागत होना चाहिये जहाँ इनका प्रभाव न हो और जो तुमको कम से कम धर्म का भाई कहलाने का तो अधिकार दे।"

दुर्जन—'बात ठीक है। फिर हम क्या करें?"

गोगा—"यातो तुम वर्तमान धर्मों में से किसी को ग्रहण करो जिससे तुम्हारी मान प्रतिष्ठा भी बढ़े या मुसहरों का कोई नया पन्थ चलाया जाय जो उनको उभरने का अवसर दे।"

कोलाहल—"बड़े बाप! तुमने बड़ी अच्छी बात कही। मुसहरों का अपना धर्म हो। उसका सुधार इस प्रकार कर लिया जाय कि उससे वर्तमान समय की सारी आवश्यकतायें दूर हो सकें। इस काम के लिये आस पास के सारे मुसहर इकट्ठा किये जायँ और उनसे सम्मति ली जाय।"

सब ने इस बात को मान लिया।

तीसरा अध्याय

मुसहर कान्फ्रेंन्स

पहिले दिन की कार्रवाई

मुसहर जैसे जंगली और अपढ़ लोग जो सभ्यता का नाम तक नहीं जानते आज जल्सा करने पर उद्यत हैं आवश्यकता आप सारी बातों की सूझ सुझाती रहती है। इन में से सैकड़ों एक मनुष्य भी पढ़ा लिखा नहीं होता। ऊँची जाति के हिन्दू इनको बराबर कुचलते चले आ रहे हैं। पढ़ना लिखना तो दूर रहा! इनको ऐसे संस्कार दिये गये हैं कि यह अपनी मूर्खता के बोझ से दबे हुये सर तक नहीं उठा सकते। यह भ्रम और भ्रान्ति की जाल में ऐसे फाँसे गये हैं कि अपनी वर्तमान नीच दशा को ब्रह्मा की टाँकी समझते हैं। ऐसे घोर अन्धकार के समय में एक मनुष्य संसार में उत्पन्न हुआ। जिसके प्रेम और व्याख्यान ने गिरी से गिरी हुई जाति को जीवन सुधार और उन्नति का अधिकार दिया। क्या यह जादू नहीं है। यह महान पुरुष स्वामी दयानन्द जी सरस्वती हैं।

विचार में परिवर्तन हुआ और उसने चारों ओर से हाथ पाँव मारना आरम्भ किया। अब क्या है! यह उसी की धार में बहे जा रहे हैं। लोग अभी ख्याल की फिलास्फी को नहीं समझते ; इसी की हुकूमत है। यही हाकिम है जब इसका सिक्का दिलों पर बैठ जाता है लोगों को उसका लोहा मानना और उसी का होकर रहना पड़ता है। धर्म कर्म लिखना पढ़ना कारबार व्यवहार और परमार्थ यह सब क्या हैं? सब ख्याल ही ख़्याल हैं। संसार कल्पित है। दुनिया ख़्याल है, रिश्ते

नाते ख़याली ! सम्बन्धी और नातेदार ख़याली और जिस सम्बन्ध से यह नाते जोड़े जाते हैं वह भी ख़याल ही ख़याल है इसी दृष्टि से वेदान्त शास्त्र यहाँ सारी वस्तुओं को कल्पित (ख़याली) बतलाता है।

पढ़े लिखे लोग इश्तहार बाज़ी से काम लेते हैं। जंगली और निचले दर्जे के मनुष्य वही काम अपने ख़याल से लेते हैं और इस सिरे से उस सिरे तक लाखों और करोड़ों मनुष्यों के हृदय में अपने भाव को स्थान दे देते हैं। यह एक प्राकृतिक नियम या रहस्य है जिसे पढ़े लिखे लोग कठिनाई से समझते हैं। सन् १८५७ का बलवा इसी प्राकृतिक नियम के अनुसार एक ही दिन में सारे भारतवर्ष में फैल गया था।

कुछ थोड़े से मुसहर राधास्वामी धाम के पास बाग के गढ़ों में पशुओं की तरह रहते थे—एक दम नंगे ! न कोई बिछौना न सामान ! न बरतन न भाँड़े ! जगह जगह के मुसहर उस नियत दिन पर इस जगह इकट्ठे हो गये। उनके साथ दो चार दस पढ़े लिखे ब्राह्मण भी तमाशा देखने के लिये आ गये। सब बाग में नंगी जमीन पर बैठे, गोगा सरपंच माना गया और कोलाहल ने अपनी भाषा में लोगों के सामने अपने उद्देश्य को प्रकट किया—

"हम जंगली असभ्य और पशु समझे जाते हैं। क्यों ? क्योंकि हमारा धर्म कर्म मूर्खता और अज्ञानता का है। यह दशा अच्छी नहीं है। हम ईश्वर को नहीं मानते केवल 'माई बापू' माई 'बापू' कहकर अपनी पूजा करते हैं। स्वामी दयानन्द जी महाराज मिर्जापुर में आये। हमने उनको कहते हुये सुना—: ईश्वर को मानो। ईश्वर तुम्हारी सहायता करेगा' और अब हम ईश्वर के मानने के लिये तैयार हैं। इसी लिये

हम सब यहाँ इकट्ठे हुये है कि अपने पुराने और सड़े गले धर्म को छोड़ दें और ईश्वर की पूजा ऊँची जाति वालों के ढंग पर करें जिस में हम भी उन जैसे बन जायँ। कहो! तुम्हारी क्या सम्मति है?"

किसी मुसहर ने बोलने का साहस नहीं किया। गोगा ने आये हुये तमाशाई ब्राह्मण पण्डितों से कहा-"और लोग कुछ नहीं कह रहे हैं तुम ही कुछ बोलो।"

देवदत्त मिश्र ने हँस कर उत्तर दिया—"तुम्हारा माई बापू ठीक है। माई बापू ही कहना ईश्वर की सच्ची पूजा है।"

माता अवतार पाँडे बोले—"अपना धर्म चाहे बुरा और दूसरों का भला हो अपना धर्म न छोड़ना चाहिये।"

राम बरन उपाध्याय कब चुप रहने लगे—"ईसाई धर्म वाले भी अँग्रेजी भाषा में माई बापू ही को ईश्वर कहते हैं। मसीह बेटा, मसीह का बाप ईश्वर और मसीह की माँ मरियम उनकी माँ है। वह नित्य यही प्रार्थना करते हैं—'ऐ मेरे बाप जो आसमान पर है मुझे आज की रोटियाँ दे। इनकी उन्नति सारे संसार में सबसे बढ़ी हुई है। इस लिये तुम भी अपने बाप को जो दुनिया छोड़ कर अब आसमान पर रहता है। ईश्वर मान कर पूजो।

शिवचरन चौबे ने कहा--"और हम ऊँची जाति वाले हिन्दू क्या करते हैं! हम भी तो माई बापू माई बापू कहा करते हैं। माई बापू के अतिरिक्त और कौन ईश्वर है या हो सकता है।"

उन्होंने अपने वचन के प्रमाण में यह श्लोक सुनाया:--

"त्वमेव माता च पिता त्वमेव';

त्वमेव भ्राता च त्वमेव बान्धवः।
विद्या त्वमेव द्रविणम त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देवः ॥"

गोगा चुप ! नवयुवक मुसहरों में खलबली पड़ गई--"यह बहकाने वाले और भ्रम में डालने वाले लोग यहाँ कैसे आ गये ! यह हमारी उन्नति के शत्रु और नीची जाति वालों के कुचलने वाले हैं। हम इन की कोई बात न सुनेंगे।"

रविदत्त त्रिपाठी ने कहा--"सुनो मुसहरो ! हम तुम को सच्ची बात सुनाने आये है, तुम जैसे हो वैसे बने रहो। जंगल और बागों की लकड़ी काट कर पहुंचाया करो, पत्तल दोना दिया करो, हमारा जूठा खाया करो। यही तुम्हारा धर्म कर्म है इससे अधिक और क्या चाहते हो ?"

कोलाहल---"सैकड़ों वर्ष से तुमने हम लोगों को बहका रक्खा है हम तुम्हारी एक न सुनेंगे। तुम जाओ और हमको अपना काम करने दो।"

शिवनायक दूबे--"हम ब्राह्मण हैं। कर्म धर्म सिखाना हमारा काम है। इस लिये हम तुमको धर्म सिखाने आये हैं। धर्म की समझ किसको है !"

कोलाहल--"हम अब माई बापू करना नहीं चाहते ईश्वर को पूजना चाहते हैं। स्वामी दयानन्द जी ने हम से ऐसा ही कहा है।"

रामचरन शुक्ल--"स्वामी दयानन्द भी तो ब्राह्मण ही हैं। वह तुमको बहका रहे हैं वह पादरियों की ओर से मासिक वेतन पाते हैं। वह उलटी बातें सुझा कर तुमको अधर्मी और ईसाई बनाना चाहते हैं।"

चारों ओर से मुसहर चिल्ला उठे--"झूठ ! झूठ !! एक दम

झूठ !!! दयानन्द ईश्वर का सच्चा भक्त है।"

रविदत्त तिवारी--'सुनो! सोच समझ से काम लो। तुम ईश्वर किसको कहते हो ?';

घूरा मुसहर--'जिसने इस सब को जन्म दिया यही ईश्वर है।"

रविदत्त तिवारी--"सच्ची बात है। तुम्हारे जन्म दाता तुम्हारे माँ बाप हैं। इस लिये वही ईश्वर हैं दूसरा ईश्वर कौन है और क्या हो सकता है। इस लिये 'माई बापू' माई बापू' करना ही ठीक है।"

पंचकौड़ी मुसहर—"यह ईश्वर नहीं है। इनको भी ईश्वर ने ही जन्म दिया था। हम उसको ईश्वर अब मानना चाहते हैं जिसकी शिक्षा स्वामी दयानन्द जी ने दी है।"

लक्ष्मी कान्त पाठक—'तब तुम ईसाई होना चाहते हो। सारे मुसहरों ने एक साथ कहा—"मान न मान मैं तेरा मेहमान! तुम चुप रहो। हमको अपना काम करने दो।'

सब ब्राह्मणों ने मिलकर उनको समझाया-बिना प्रमाण के साथ यदि कोई बड़ा बूढ़ा भी बात करे तो उसे कभी न मानना चाहिये और प्रमाण के साथ यदि एक लड़का भी कुछ कहे तो उसको ध्यान से सुनना चाहिए! हम तुम को वेद और शास्त्रों का प्रमाण देकर समझायेंगे कि तुम्हारा धर्म सच्चा और तुम्हारा माई बापू कहना ठीक है। अपने धर्म पर डटे रहो। बहको और भटको नहीं।'

नवयुवक मुसहर फिर बोले-"हम वेद शास्त्र नहीं जानते। तुम्हारा प्रमाण हमारे किस काम का है।"

ब्राह्मण—"स्वामी दयानन्द भी तो वेद शास्त्र का प्रमाण देकर तुमको समझाते हैं।"

कालाहल—"बहुत अच्छा! तो तुम यहाँ हमारे सामने वेद पढ़ कर सुनाओ परन्तु देखना कहीं और श्लोक न पढ़ देना।"

ब्राह्मण—"तुमको वेद सुनने का अधिकार नहीं है। हम मुसहरों के सामने वेदमन्त्र न पढ़ेंगे और यदि कहीं तुमने किसी से वेद मन्त्र सुन लिया और हमारा बस चला तो तुम्हारे कानों में गर्म खौलता हुआ सीसा भर देंगे। यह शास्त्रों की आज्ञा है।"

गोगा अब तक चुपचाप बैठा हुआ था। अब जाकर उसकी आंखें खुलीं और नवयुवक मुसहरों के साथ सच्ची सहानुभूति का भाव उत्पन्न हुआ।

उसे यह भी पता लग गया कि यह ब्राह्मण यहां से जाने वाले नहीं हैं। यह केवल छेड़ छाड़ करने पर तुले बैठे हैं। वह सयाना और चलता पुरजा था। उसने सोच समझ कर नव-युवकों से कहा—"समय बहुत हो गया है। यह मुसहरों की पञ्चायत है। पंचायत में हम शराब पीते और मांस खाते हैं। साथ ही साथ बातों पर विचार भी करते जाते हैं। जाओ शराब के मटके, भुना हुआ सूअर कछुआ और चूहों का माँस उठा लाओ।"

ऐसा ही हुआ और जितने ब्राह्मण आये हुये थे। सब के सब वहाँ से तीन तेरह हो गये और यह खाने पीने लगे।

जब खाने पीने से गर्मी आई गोगा ने कहा—'काम कुछ भी नहीं हुआ समय यों ही नष्ट हो गया मैं समझ गया हूं नवयुवक मुसहर अपने बाप दादाओं के धर्म से घृणा करने लग गये हैं अब इनकी रोक थाम नहीं की जा सकती है। यह ऊँची जात के तो बन नहीं सकते और साथ ही इनका

पंडित होना भी असम्भव है। एक तो बड़ा आँदोलन मचेगा। ऊँची जाति वाले हमको उभरने न देंगे दूसरी हमारी जाति के सब लोगों के विचार में एक साथ ही परिवर्तन नहीं हो सकता। इसमें सैकड़ों वर्ष लग जाँयगे। इस लिये कोई ऐसी युक्ति सोचनी चाहिये जिसमें साँप भी मरे और लाठी भी न टूटे।"

मङ्गला मुसहर बनारस के जिले से आया था। वह वहाँ का चौधरी था, उसने गोगा से कहा—"तू बड़ा सयाना है। यह अच्छी बात है। ऐसा ही होना चाहिये। स्वामी दयानन्द जी बनारस में भी आये थे। वहाँ के नवयुवक मुसहरों में भी खलबली पड़ गई है। हर जगह हल चल मची हुई है। कुछ न कुछ अवश्य ही करना चाहिये नहीं तो यह किसी काम के न रहेंगे।"

इलाहाबाद के चौधरी बुद्धा ने कहा—"बिचली राह सब से अच्छी! न बहुत ऊँची न नीची। मध्य मार्गी सदा सुखी पुरानी कहावत है। इसी से हमें शान्ति मिलेगी। ऊँचे धर्म को हम ग्रहण नहीं कर सकते क्योंकि उसकी समझ बूझ नहीं है निचली दशा में हम सैकड़ों क्या हजारों वर्ष से पड़े हुये हैं। कुछ उभरने का अवसर मिलना चाहिये। ऊँची जाति वाले हमारी सहायता न करेंगे। वह तो हमको पशुओं से भी गिरा हुआ समझते हैं। इस लिये हमको अपनी भलाई आप सोचनी चाहिये। जिसमें हम न ऊँची जाति वालों की दृष्टि में खटकें और न वह हम से चौकन्ना हों।"

राधास्वामी धाम के आस पास वाले मुसहरों ने कहा—"स्वामी दयानन्द जी ने हमको विश्वास दिलाय है कि सारे मनुष्यों का धर्म एक हो सकता है।"

बुद्धा--"नवयुवको ! हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और हैं।"

दुर्जन—"फिर क्या स्वामी दयानन्द जी झूठे और धूर्त्त हैं जो कहते और हैं और करते और हैं ?"

बुद्धा--"नहीं न वह झूठे हैं न धूर्त्त हैं, सच्चे हैं और सच्ची बात कहते हैं परन्तु तुम इसे इस प्रकार समझो। यदि कोई यह कहे कि सब मनुष्य एक हैं तो वह झूठा नहीं है परंतु मनुष्य मनुष्य में भेद होता है। कोई लड़का है। कोई युवा है कोई अधेड़ है कोई बूढ़ा है। कोई बहुत बुद्धिमान है कोई साधारण समझ बूझ का है। किसी के पास धन द्रव्य भरा हुआ है। कोई रोटियों का मुहताज है। मनुष्य तो एक हैं परन्तु उन में भेद भी है, यही दशा धर्म की भी है। किसी का धर्म बच्चों का धर्म है, किसी का सयाने का, किसी का अधेड़ों का और किसी का बूढ़ों का ! एक होते हुये भी भेद भाव का होना आवश्यक है। यह मेरे कहने का आशय है। सम्भव है स्वामी दयानन्द जी का भी यही विचार हो।"

सब लोग चुप हो रहे क्योंकि बुद्धा की बातों में सचाई थी।"

गोगा ने कहा—"अब समय बहुत हो गया है। अब अधिक बात चीत नहीं हो सकती हैं। जो कुछ कहना सुनना है कल पर रक्खो परन्तु काम की बातें हो बकवास न हों।"

नवयुवक—"आज का दिन ब्राह्मणों ने नष्ट करा दिया।"

गोगा—"ऐसा फिर न होगा।"

और सब मुसहर खा पीकर सो रहे।

चौथा अध्याय

मुसहर कान्फ्रैंस

दूसरे दिन का जल्सा

जो लोग अब तक प्राकृतिक अवस्था के समीप हैं वह सवेरे उठ कर काम काज में लग जाते हैं। पशु पक्षी सब के सब तड़के ही उठ जाते हैं। यह इनका स्वभाव है। मुसहर अभी तक इसी दशा में हैं यदि गहरी दृष्टि से इनके जीवन व्यवहार को देखा जाय तो पता लग सकता है कि सतयुग के अन्त समय के मनुष्य कैसे रहे होंगे। जो लोग यह समझते हैं कि सतयुग सभ्यता की निखार और उन्नति का समय रहा होगा वह भूल पर हैं। उस समय मनुष्य इतना दुख और बंधन में नहीं फँसा था परन्तु उन्नति और सभ्यता का सिलसिला त्रेता से चलता और कलियुग तक आते आते वह पूर्ण हो जाता है। यह बातें हिन्दुओं के पुराणों समझ में आती हैं। यह कलियुग बुद्धदेव के जन्म दिन से अपना प्रभाव डालने लगता है। क्यों कि यह बुद्धि की बुद्धि और निखार का समय है। यह दशा किसी और युग में नहीं होती इसके अन्त में कल्की अवतार होता है जो बुद्धि विवेक और भेद भाव को मेटकर फिर सतयुग को लौटा लाता है।

दिन निकलने से पहिले मुसहर उठे और शौचादि से निवृत होकर पंचायत के जल्से में आ बैठे। आज का सरपंच बुद्धा बनाया गया जो इलाहाबाद के जिले के किसी देहाती गांव के बाग से आया था।

दुर्जन मुसहर ने खड़े होकर कहा—"सुनो मुसहर भाइयो! सब बदले यदि कोई नहीं बदला तो तुम नहीं बदले अब बदलो और दूसरों को सदृश्य तुमभी उन्नति के मार्ग में आओ। ईश्वर को पूजो और स्वामी दयानन्द जी की बातों पर विचार करो।"

सोमारी मुसहर—"ईश्वर क्या है?"

शुक्रा—"जिसमें विचित्र और महान शक्ति हो।"

एतवरिया—"चूहा महान शक्ति है। मूष (चूहा) बड़ा ही चतुर होता है. पृथ्वी खोदता है, नाज इकट्ठा करता है ऊँची जाति वाले उसे गणेश की सवारी मानते हैं। वह गणेश अर्थात हाथी के रूप वाले देवता का बोझ उठाता है। इस लिये वह ईश्वर है।"

मंगला—"इसी लिये हम लोग मुसहर कहलाते हैं। वह तो हमारा प्रिय आहार है। हम उस पर अधिकार रखते हैं वह ईश्वर नहीं हो सकता।"

बृहस्पतिया—"तब सूअर ईश्वर होगा क्योंकि वह शेर चीते और हाथी से भी बलवान है। वह हाथी के पेट के नीचे जाकर उसकी छाती को फाड़ डालता है। इसी लिये हिन्दू उसे बाराह भगवान कहते हैं।

सनिचरा—"यह भी ईश्वर नहीं है क्योंकि हम उसे खा डालते हैं।"

"तब कछुआ ईश्वर होगा वह सौ सौ और दो दो सौ वर्ष तक पृथ्वी के अन्दर गड़ा रहता है। किसी के मारे मरता नहीं हिन्दुओं में वही दूसरा अवतार है।"

'हम उसे भी चटकर जाते हैं वह ईश्वर नहीं हो सकता।"

तब शेर ईश्वर होगा हिन्दू उसे नरसिंह भगवान समझ

कर पूजते हैं।"

नहीं! नहीं!! जंगली गोड़ भील शेरों को आये दिन मारा करते हैं यदि हम चाहें तो हम भी ऐसा ही कर सकते हैं।

"तब मनुष्य ही ईश्वर होगा क्योंकि ऊँची जाति वाले वामन, परशुराम, राम और कृष्ण आदि मनुष्यों को पूजते हैं।"

'मनुष्य मनुष्य को दबा लेता है वह कैसे ईश्वर होगा?'

वाद विवाद आरम्भ हो गया पृथ्वी अग्नि जल वायु और बिजली सब के नाम नवयुवक लेते गये उनको ईश्वर कहते गये परन्तु इन सब का खंडन होता गया। अन्त में मनुष्य ही को सब ने सर्व श्रेष्ठ बतलाया इन जंगलियों की बातें पढ़े लिखे पंडितों के सुनने ही योग्य थीं। देर तक सोच विचार होता रहा। कोई बात निर्णय नहीं हो सकती तब गोगा ने कहा—'भाइयो' तुम सबकी बातों का सारांश यह निकलता है कि मनुष्य ही सबसे बलवान है। वही ईश्वर है परन्तु तुम इस पर भी आरूढ़ नहीं होते बार बार तुमको मानना पड़ता है कि संसार का सच्चा ईश्वर यदि कोई हो सकता है तो वह केवल मनुष्य ही हो सकता है परन्तु हमारे नवयुवक स्वामी दयानन्द जी के बताये और समझाये हुये ईश्वर के नाम पर उधार खाये बैठे हैं। इस पर मुझे एक कहानी याद आगई इसे सुनो सोचो समझो और बिचारो।'

सब ने एक साथ कहा—'वह कहानी हमें सुनाओ।'

गोगा ने कहा—'हमारे यहां इसी गाँव किशुनदेवपूर में एक अमीर की लड़की थी। चमारों को ऊँची जाति वाले नहीं छूते क्योंकि वह मरी हुई गाय का माँस खाते हैं। ऊँची जाति वाले भी माँस खाते हैं परन्तु वह मार कर खाते हैं। इस मार कर खाने में वह अपनी बड़ाई समझते हैं वास्तव में देखा जाय

तो यह भी मरे हुये जीव जन्तु खाते हैं जाती मछली कौन खाता है ? कोई भी नहीं ! परन्तु इनमें अहंकार और अभिमान है। अपने को अच्छा दूसरों को बुरा समझते हैं. यह इनकी भूल है या नहीं ? इन्हें समझाये कौन। इनका तो धर्म ही घमंड है और अपने को छोड़कर सबको अछूत मान रक्खा है इस मूर्खता का कहीं ठिकाना भी है। इसी चमार जाति की वह लड़की थी. उसकी यह इच्छा थी कि वह जब विवाह करेगी अपने से ऊँचे और बलवान पुरुष के साथ करेगी उसे इस भ्रम ने दबोच लिया जैसे इस समय हमारे नवयुवकों को स्वामी दयानन्द के कल्पित ईश्वर के भ्रम ने दबोच रक्खा है. लड़की सयानी हुई। माँ बाप और बिरादरी वालों ने इसके लिये कई बर (दूल्हा) ढूँढे। वह किसी की नहीं मानती थी। उसे अपने से कुलीन और बलवान बर की खोज थी। माँ बाप चुप हो गये। एक दिन लाला धनपत राम पटवारी गाँव में आये जो मौजा धनीपुर के रहने वाले कायस्थ थे। उनके आते ही सारे चमार इकट्ठा हुये, उन को सलाम किया और आदर सत्कार के साथ चारपाई पर बिठाया। लड़की ने समझा गांव का पटवारी सबसे बड़ा है ! जब वह उठकर चले वह आगे आगे लड़की पीछे पीछे ! थोड़ी दूर चलने पर लाला धनपत राय की दृष्टि उसपर पड़ी. पूछा—तू क्यों मेरे पीछे आ रही है ? वह बोली-'तुम सबसे बड़े आदमी हो तुम्हारे साथ विवाह करूँगी।' वह चुपके होगये और मौजा पूरा कानूनगोयान में गये जहाँ लाला माता विशुन साहेब कानूनगो रहते थे। वह खाट पर बैठे हुये थे। पटवारी सलाम करके नीचे बैठा लड़की ने पटवारी को तो छोड़ दिया. कानूनगो के पास बैठी रही। पटवारी के चले जाने पर इन्होंने पूछा-तू क्या चाहती

है ?' वह बोली-तुम सबसे बड़े आदमी हो तुम्हारे साथ विवाह करना है।' यह मुस्कराकर चुप हो रहे, नहा धोकर खाना खाने के पीछे पालकी पर सवार हुये। लड़की पीछे पीछे और पालकी आगे आगे थी। यह तहसीलदारी में पहुँचे। उस समय तहसीलदार एक पंडित थे जिनका नाम काशी प्रसाद था कनूनगो ने इनको सलाम किया लड़की ने समझा कानूनगो से तहसीलदार बड़ा है उसे छोड़ा और तहसीलदारी की कचहरी में बैठी रही। उसका विचार था कि इसे छुट्टी मिले तो विवाह के लिये बात चीत करूँ। इतने में राज बनारस के कुंअर साहब की सवारी निकली। वह हाथी पर थे। पंडित काशी प्रसाद सवारी आते ही हाथ बाँध कर उठ खड़े हुये और कुंअर साहब को झुककर सलाम किया। लड़की ने सोचा कुंअर साहेब बड़े हैं। तहसीलदार साहब का पीछा फिर नहीं किया और पीछे पीछे हाथी के साथ चली। इतने में पंडित लीलाधर मालवी उधर से आ रहे थे कुंअर साहेब ने उन्हें नमस्कार किया लड़की ने मालवी जी को कुंअर साहेब से भी बड़ा और ऊँचा समझा। हाथी तो चला गया यह मालवी जी के पीछे लगी। उन्होंने पूछा –'तू क्या चाहती है ?' वह बोली - तुम सबसे बड़े हो। तुम्हारे साथ विवाह करूँगी। यह हँस कर चुप हो रहे और हर नाथ जी के मन्दिर पर जाकर शिव भगवान की मूर्ति की हाथ बाँध कर पूजा की ! लड़की ने समझा महादेव की मूर्ति पंडित जी से श्रेष्ठ है पंडित जी को तो जाने दिया यह डटकर वहाँ बैठ गई इतने में एक कुत्ता आया उसने शिव भगवान की पिण्डी पर टाँग उठाकर पेशाब कर दिया। उसने कुत्ते को शिव भगवान से भी बलवान और ऊँचा समझा। वह उसके पीछे लगी। कुत्ते ने समझा कहीं

मार न दे इस लिये वह भागा। लड़की ने उसका पीछा किया। वह दुम दबाकर भागते भागते किशुन देव पुर गाँव में पहुंचा। यहाँ एक चमार का लड़का खड़ा हुआ था जो पहिले से उसके लिये वर चुना गया था। उस लड़के ने एक डंडा तान कर कुत्ते को मारा। लड़की समझ गई कि वह लड़का कुत्ते से भी बलवान है उसके पीछे लगी, माँ बाप से कहा--आज ही मेरा विवाह उसके साथ कर दो। वह तो चाहते ही थे सारे चमारों के सामने दोनों का विवाह होगया। चमार के लड़के ने इसकी कहानी सुनकर हँस दिया। इसने क्रोध में आकर उसके मुँह पर एक तमाचा जड़ा। वह रोता हुआ भाग निकला। इसने अपने मन में कहा—मूर्ख मेरे साथ विवाह करने आया था। यह मेरा दुल्हा नहीं हो सकता क्यों कि मैं इससे अधिक बलवान हूँ। स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध उनका उसी दिन टूट गया और लड़की अपने आप को सब से बलवान ईश्वर समझ बैठी।

इसी प्रकार भाइयो! तुम लोग व्यर्थ ही बादविवाद कर रहे हो कोई बात इस तरह तै न होगी। इस बकवास का परिणाम कुछ नहीं है। जो है वही रहेगा। अच्छा होता कि तुम मुसहर के मुसहर बने रहते। नहीं मानते हो तो कोई ऐसी युक्ति सोचो कि इस जलसे से कुछ काम भी हो। यह तो ऊँची जाति वालों की पंचायत ठहरी जिस में आपा धापी मची रहती है और काम काज कुछ नहीं होता।"

सोमारी मुसहर—"फिर तुम वह युक्ति क्यों नहीं बताते?

गोगा—"तुम मेरी बात न मानोगे, आज का सरपंच बुद्धा बनाया गया है। जो वह कहे उसी पर आरूढ़ हो जाओ। नाऊ की बरात में जने जने ठाकुर बनना अच्छा नहीं है।"

सब लोगों ने शपथ किया कि आज जो कुछ बुद्धा कहेगा सब उसकी बात मान लेंगे।

बुद्धा ने कहा—कोई धर्म या पन्थ बिना गुरू के नहीं चलता। यह पहिली बात है। दूसरी बात यह है कि हर धर्म का कुछ न कुछ सिद्धान्त अवश्य होता है। बिना इसके धर्म चलना ही नहीं। तीसरी बात यह है कि उस सिद्धान्त पर चलकर काम करने के नियम भी हुआ करते हैं। इन सब के होते हुये किसी आदर्श पुरुष का जीवन भी सामने होना चाहिये जिसके जीवन को देखकर हम भी अपने आप को सुधार के साँचे में ढाल सकें। इसी पुरुष को गुरु कहते हैं इस लिये सब से पहिले गुरु का खोजना आवश्यक है।"

संयोगवश उसदिन भी एक ब्राह्मण रामखेलावन दूबे तमाशा देखने आगया था। उसने गुरु का शब्द सुनते ही ऊँचे स्वर से कहा—"जगत गुरू ब्राह्मण और ब्राह्मण गुरु सन्यासी।' सारे संसार का गुरु ब्राह्मण है और ब्राह्मण का गुरु सन्यासी होता है। तुम लोग किसी ब्राह्मण को अपना गुरु बनाओ वही तुम को धर्म कर्म की बातें समझा सकेगा।

यह बात सुनना था कि फिर मुसहरों में हुल्लड़ मचगया—'यह बीच में बोलने वाला कौन हमारे यहाँ बिना बुलाये हुये आगया और बिना हमारी आज्ञा के इसने क्यों छेड़ छाड़ आरम्भ कर दी!'

गोगा ने आँख उठाई। नवयुवक मुसहरों ने उसी समय शराब के मटकों और कछुये और सुवर के भुने हुये माँस टोकरों में भर भर कर सामने ला दिये और कहा - तुम लोग शराब पीते चलो और माँस खाते जाओ और पंचाइत की बातें

भी होती रहें।"

राम खेलावन दुबे अपनी चौकड़ी भूल गये और उस जगह से ऐसे बगटुट भागे जैसे गधे के सर से सींग। फिर तो मुसहरों में शान्ति आगई। इन्हों ने ब्राह्मणों के भगाने की अच्छी युक्ति निकाल ली थी। फिर बात चीत होने लगी।

कालू बोला—"गुरु कैसा हो ?"

बुद्धा—"चौड़ा ललाट, चमकती हुई आँखें और दिलों में घुसने वाले बचन यह गुरु के लक्षण हैं।"

दुर्जन—"परन्तु हमको ऐसा गुरु खोजना है जो साधारण शक्ति वाला हो नहीं तो इन सीधी सादी बातों से मुसहर उस पर विश्वास और निश्चय न लायेंगे और न उसकी बात मानेंगे।"

बुद्धा—"फिर ऐसा गुरू खोजो।"

कोलाहल—'और ईश्वर !"

बुद्धा—"जब गुरु मिलेगा वह आप ईश्वर के विषय में तुम को समझा बुझा लेगा। बिना गुरु की सहायता के तुम ईश्वर को न समझ सकोगे। गुरु ही का हाथ आना कठिन है।'

दुर्जन—'स्वामी दयानन्द ने जिस ईश्वर की महिमा गाई है क्या वह ठीक नहीं है ?"

बुद्धा—'एक तो मैंने यह नहीं सुना कि स्वामी दयानन्द का ईश्वर के विषय में क्या विचार है बिना समझे बूझे अपनी सम्मति देना भूल है। दूसरे सम्भव है स्वामी दयानन्द का ईश्वर ग्रन्थ बद्ध (किताबी) हो ऐसे ईश्वर से मुसहरों को कोई लाभ नहीं पहुँच सकता क्योंकि वह पढ़ी लिखी जाति के नहीं हैं। इससे अच्छा यही है कि अपने लिये आप गुरु की खोज में लगो।"

इस बात को सबने मानली। और बातों को गुरु के हाथ आने तक रोक दिया गया और सारे मुसद्दर जहां जहाँ से आये थे अपने अपने घर को चले गये'

पांचवां अध्याय

गुरु की खोज

गुरू कौन है? यह प्रश्न सुगम है और साथ ही साथ कठिन भी है। साधारण रीति से तो पहिली गुरु मां है। दूसरा गुरु बाप है। तीसरा गुरु आचार्य है और यों तो सारा संसार गुरुओं से भरा पड़ा है। जिससे मनुष्य कुछ भी सीखता है उस विद्या की दृष्टि से वही उसका गुरु है। यह सब बाहिरी गुरु होते हैं। इनके अतिरिक्त एक आत्मिक गुरु भी होता है जो मनुष्य के भ्रम और भ्रान्ति को दूर करके उसे आत्मिक शांति देता है। धार्मिक और आत्मिक दृष्टि से यह सब से बड़ा है। कुछ लोग ईश्वर को गुरु मानते हैं। यह विचार उचित है या अनुचित इस पर यहाँ बात चीत करने की आवश्यकता है भी और नहीं भी है धर्म मनुष्य के लिये बहुत ही शांति प्रद पदार्थ है। इस धन के देने वाले को गुरु का नाम दिया जाता है और वह मनुष्य ही हो सकता है।

पंचायत होगई। सारे मुसद्दर अपने अपने घरों को चले गये नवयुवक मुसद्दरों के चित्त में गुरु की खोज का भाव बहुत

ही दृढ़ हो गया। वह चाहते थे कि कोई ऐसा महान पुरुष मिल जाय जो उन्हीं के विचारों के अनुसार उन्हें शिक्षा दे और वह शिक्षा भी ऐसी हो जिसे वह ग्रहण कर सकें और उसके द्वारा वह इस लोक में अपनी सामाजिक और जातीय उन्नति कर सकें।

इधर गये उधर गये। ऊँची जाति वालों के व्यवहार से वह महादुखी हो गये। साधू सन्यासी तो हर जगह मिलते हैं और मिला करते हैं परन्तु इनकी ओर भी उनका ध्यान नहीं जाता था। क्योंकि यह भी इन बेचारों को पशु ही समझते थे। यह उनसे कोसों दूर रहना चाहते थे फिर गुरु मिले तो कैसे मिले!

इस खोज में कई महीने लग गये। एक दिन यह निराश होकर बाग में बैठे हुये थे। सब के सब चुप चाप किसी सोच विचार में थे। कोलाहल आया। उसने कहा—"यहां से थोड़ी दूर नाले के पास गुफा में कोई मनुष्य रहता है एक दम नंगा! मैं नहीं कह सकता कि वह स्त्री है या पुरुष है। मुझे उसके स्त्री होने का सन्देह है क्योंकि सर के बाल बहुत बड़े २ हैं और वह बड़ा ही बलवान और बुद्धिमान है।"

दुर्जन—"इन बातों का आशय क्या है?"

कोलाहल—"वह गुरु होने के योग्य है।"

सबके सब उसकी बात को सुनकर प्रसन्न हो गये परन्तु यह दशा थोड़ी देर के लिये थी।

गोगा—"यह तुमने कैसे जाना कि वह गुरु होने के योग्य है?"

दुर्जन—"तुम लोग मेरी बात का विश्वास न करोगे इस लिये मैं कहने में रुक रहा हूं।"

गोगा—"जो तुमनें देखा है उसे अवश्य कहो जिसमें औरों

को भी सोचने विचारने का अवसर हाथ आये।"

कोलाहल— 'मैं पयागदासपूर गाँव के एक बाग में लकड़ी तोड़ने गया हुआ था। पेड़ नाले के एक दम किनारे पर है। मैं उसी पर चढ़ा हुआ था। देखता क्या हूं कि एक बहुत बड़ा भयानक सूवर गुर्राता हुआ चला आ रहा है और उसकी पीठ पर कोई सवार है जो एक दम नंगा है। सुवर नाले की राह से दूर तक गया फिर आँखों से ओझल हो गया विचित्र दृश्य था। मैंने अपनी आंखों से ऐसा कभी नहीं देखा था। उसी समय पेड़ से उतरा और हाथ में लकड़ी चीरने का रम्मा लिये हुये नाले की राह से उसकी खोज में निकला। बाबू सूरज नरायन सिंह ठाकुर के बाग तक चला गया। यहां नाला बहुत ही गहरा और टेढ़ा हो गया है। उसको बिरनाई का नाला कहते हैं और उस पर मूँड़ा देव के नाम के महादेव की पिंडी रक्खी हुई है जिसकी ऊँची जाति वाले कभी कभी पूजा करते हैं। इसी के पास पूर्व को ओर एक गहरा गढ़ा है जो गुफा की आकार का बना हुआ है। मुझे सन्देह कि सूवर और सूवर सवार दोनों ही उसमें जाकर छुप गये।"

गोगा—"वह जगह बड़ी भयानक समझी जाती है। बरसात के दिनों में बाढ़ के समय गंगा का पानी वहाँ बांसों आजाता है। ऊँची जाति वाले ऐसे समय वहाँ जाकर नहाते हैं। एक साल ठाकुरों की दो लड़कियाँ नहाते समय उसमें डूब गईं थीं। उनकी लाशों का पता तक नहीं लगा। लोग कहते हैं कि वह चुड़ैलें हो गई हैं और आने जाने वालों को डराती हैं जेठ बैसाख के दोपहर के समय उधर कोई जाता तक नहीं। रात में तो कोई उधर का नाम तक नहीं लेता। बरसात के दिनों में गंगा की बाढ़ के समय हर साल दो एक मनुष्य उसमें

डूब जाते हैं वह भूतों के रहने की जगह कहलाती है सम्भव है तुमने जो दृश्य देखा है वह किसी भूत का हो।"

कोलाहल—'मैं भूतों से नहीं डरता! सूवर की पीठ पर जो सवार था मैं उसे योगी समझता हूँ। योगी ही गुफाओं में रहते हैं।"

गोगा—"और सूवर ?"

कोलाहल—'सूवर उसकी सवारी है।'

गोगा—'आज तक मैंने नहीं सुना कि कोई मनुष्य सूवर पर भी सवार हुआ है।'

कोलाहल—'योगियों में सिद्धी शक्ति होती है। वह आश्चर्य जनक काम कर सकते हैं। पशुओं को वश में लाना उनके लिये क्या कठिन काम है। यह शक्ति साधारण मनुष्यों में भी होती है। वह तो इन्हें पालते हैं और अपना काम निकालने हैं। यदि योगी किसी युक्ति से भयानक पशुओं पर सवारी करते हैं तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है।'

गोगा—'तुम कहते तो सच्ची बात हो। मनुष्य एक बार इन पर अपना सिक्का बिठा ले फिर यह उसके वश में आ जाते हैं। और इनकी सन्तान भी वैसी ही बन जाती है।

दुर्जन—'यह विचित्र मनुष्य होगा। यह अवश्य हमारा गुरू हो सकेगा। इसका पता लगाना चाहिये।'

काली चरना मनचला नवयुवक था। उसने कहा—'यह काम मेरे हाथ में दे दो। मैं उसकी ताक में रहूंगा और तुमको आकर पता दिया करूँगा।'

गोगा—'यह सब ठीक है परन्तु इसमें यह बात है कि यदि कहीं यह भूत हुआ तो फिर लेने के देने पड़ेंगे। भूत बड़े भयानक होते हैं।'

काली चरना – 'लंका डाइन शंका भूत ! मैं किसी से नहीं डरता। यदि यह मनुष्य भूत निकला तो मैं उसका पीछा छोड़ दूँगा और यदि मनुष्य है तो उसे राह पर लाना इतना कठिन नहीं है।'

गोगा—'बाबा भूतों से बच कर रहना चाहिये। यह बुरी बला है। एक ब्राह्मण को भूत के वश में करने का ध्यान था। जब वह उसे वश में न ला सका तब वह किसी योगी के पास गया। योगी ने रोका कि भूत के फेर में न पड़ो। ब्राह्मण ने कहा—'मैं भूत से काम लेना चाहता हूं। वह काम झटपट कर देते हैं।' योगी बोला—'इसमें सन्देह नहीं काम तो वह ऐसा ही करते हैं परन्तु तुम इतना काम कहाँ से लाओगे ?' उसने उत्तर दिया—'मेरे पास बहुत काम है।' तब योगी ने उसे मन्त्र बताया। ब्राह्मण जाप करने लगा, भूत प्रगट हुआ कहने लगा—'काम बताओ।' उसने खेत जोतने की आज्ञा दी 'उसने दम के दम में खेत जोत दिया।' ब्राह्मण ने कहा—'घर में नाज का ढेर लगा दो।' उसने लगा दिया। उसने उपले मँगवाये। भूत ने इसे भी दम के दम में कर डाला ब्राह्मण को इन्हीं बातों की आवश्यकता थी। सब कुछ झटपट हो गया और भूत फिर काम मांगने लगा। अब तो ब्राह्मण घबराया। भूत बोला- 'काम न दोगे तो मैं तुम्हें खा जाऊँगा।' ब्राह्मण डरा 'योगी के पास दौड़ा गया। आगे आगे ब्राह्मण पीछे २ भूत।' और हाथ बांध कर उसने प्रार्थना की—'योगी राज ! मुझे बचाओ नहीं तो भूत मुझे खा डालेगा। योगी ने कहा—'मैंने तुझको पहले ही समझा दिया था कि भूत बुरे होते हैं। अच्छा मेरे सामने यह कुत्ता बैठा हुआ है। भूत से कहो उसकी दुम सीधी करे।' ब्राह्मण ने ऐसा ही किया। भूत कुत्ते

की दुम सहलाने लगा। वह सीधी करता था छोड़ने पर फिर वह टेढ़ी की टेढ़ी होजाती थी। भूत घबरा गया। साधू से बोला — 'मुझे मुक्त करो।' योगी ने ब्राह्मण से कहा—'जो कुछ मुझे मिल चुका है बहुत है। अब भूत का ध्यान छोड़ दे।' ऐसा ही हुआ इसलिये मैं कहता हूं कि भूतों के फेर में न पड़ो।'

कालीचरन--'घबराओ नहीं! मैं चौकन्ना रहूंगा और भूत मुझे धोखा न दे सकेगा।'

दुर्जन—'अच्छा होता कि मैं भी तुम्हारे साथ रहता।' सबने इसकी बात मान ली।

दूसरे दिन कालीचरना और दुर्जन मूँड़ा देव पर गये और सारा दिन वहाँ लकड़ी काटते रहे परन्तु न कोई सुवर दिखलाई दिया न सुवर सवार! उन्होंने सोचा कि लकड़ी काटने की खटपट से योगी गुफा से बाहर नहीं निकलता। इस लिये यह ठहरा कि गर्मी का महीना है, तालाब के अतिरिक्त और कहीं पानी नहीं है। रात को सारे पशु उसी में पानी पीने जाते होंगे। इसलिये ताक में रहना चाहिये कि वह कब निकलते हैं और किस राह से होकर जाते हैं। सन्ध्या होते ही यह मूँड़ा देव की नीम के वृक्ष के नीचे दबक रहे। घंटों राह देखते रहे कोई गुफा से नहीं निकला, नींद सताने लगी। ज्यों त्यों करके यह संभल कर बैठे और चौकन्ना होकर देखने लगे। जब आधी रात होगई सीटी में हुर्रे हुर्रे का शब्द सुनाई दिया और कई गुर्राते हुये सुवर नाले की कि माँद से निकल पड़े और गुफा के पास पहुँचे! चाँदनी रात थी। दूर रहने से यह स्पष्ट देख नहीं सकते थे पर इतना पता चलता था कि वह सब सुवर दबे पांव से जा रहे हैं। जब यह गुफा के पास पहुँचे एक मनुष्य उसमें से निकला और वैसे ही 'हुर्रे हुर्रे' की सीटी बजाता

हुआ एक सुवर पर चढ़ बैठा और तालाब की ओर चल निकला। दोनों मुसहरों को विश्वास हो गया कि उनका विचार झूठ नहीं था। जी में तो आया कि पुकारें परन्तु साहस नहीं हुआ क्योंकि सुवर शब्द सुनकर तुरन्त उस स्थान पर पहुँच जाते हैं। यह उनका स्वभाव है और सुवर का सामना करना खेल नहीं है यहाँ तक कि यदि राह में शेर भी आजाय तो सुवर उसे खंग से फाड़ता हुआ निकल जाता है। यह चुप चाप बैठे रहे।

दूसरे दिन यह गोगा से मिले। कोलाहल भी वहीं था। दुर्जन ने इस बात की गवाही दी कि कोलाहल ने झूठ नहीं कहा था। गुफा में योगी रहता है और वह आधी रात के समय सुवर पर सवार होकर पानी पीने आता है। उसकी गवाही से सबको निश्चय हो गया और वह सोचने लगे कि किस प्रकार इस योगी को गुरु बनाया जाय।

देर तक बातें होती रहीं। कोई बात समझ में नहीं आई। अन्त में यह राय ठहरी कि आधी रात को सब मुसहर बाबा गोपी नाथ साहेब के तालाब पर इकट्ठा हों और दूर ही रहकर योगी से प्रार्थना करें कि वह उनका गुरु बन जाय।

रात हुई और मुसहर तालाब पर पहुंचे। तालाब के किनारे पश्चिम की ओर दो मन्दिर हैं। एक शिव जी का मन्दिर है जिसे बाबा गोपी नाथ साहेब ने बनवाया था और उसी के पास दूसरा हनुमानजी का मन्दिर है जिसको बाबा रामगरीब साहेब ने बनवाया था। शिवालय तो ऊँचा और बहुत पक्का बना हुआ है परन्तु हनुमान जी का केवल छोटा है। मुसहर सब के सब इसी छोटे देवल पर चढ़ गये और योगी की राह देखने लगे। वह चुप चाप लेटे रहे जिसमें उनके वहाँ छुपे

रहने का किसी को पता न लगे।

आधी रात हुई सूवरों की लाइन तालाब के किनारे दिखलाई दी मुसहरों ने उनके पानी पीने की आहट भी सुनी। यह चौकन्ना होकर बैठ गये। उन सूवरों के झुंड में केवल एक ही मनुष्य था। वह भी पानी पीकर अपना कमण्डल भरने लगा। यह टकटकी बाँध कर देखते रहे। जब यह सब पानी पी चुके और चलने पर हुये गोगा ने ऊँचे स्वर से पुकार कर कहा—'महाराज! आप योगी राज हो! हम आपके चेला होना चाहते हैं। हम लोग नीची जाति के मुसहर हैं, कोई हमको छूता नहीं। सभी घृणा करते हैं। इसलिये आपकी शरण में आये हुये हैं। अपना सेवक समझ कर हमको चिताइये और राह पर लगाइये।"

इनकी बात का कोई उत्तर नहीं दिया गया। वह मनुष्य सूवर की पीठ पर बैठा और सारे सूवर गुर्राते हुये जिधर से आये उधर ही चले गये।

छटवां अध्याय

गुरू के हाथ आने का प्रयत्न

मुसहर निराश होकर चले गये परन्तु यह साहसी लोग थे। यह सोच लिया कि जब पता लग गया है तो फिर हाथ

आना कोई कठिन काम नहीं है। हाँ! धैर्य और शान्ति से काम लेना चाहिये। यह सब फिर सलाह करने लगे।

कोलाहल—"देखा! मेरी बात ठीक निकली!"

दुर्जन—"पता तो लग गया परन्तु उसका आना कठिन है।"

गोगा—"जिन खोजा तिन पाइयां, गहिरे पानी पैठ।
मैं बपुरी ढूँढन चली, रही किनारे बैठ॥"

कलोचरना—"जैसे इतना हुआ है वह भी हो जायगा। मनुष्य सब कुछ कर सकता है।"

गोगा—'यह समझ में नहीं आता यह योगी कौन है और कहाँ से आया है। यहाँ का रहने वाला तो यह है नहीं, नहीं तो और लोग इसे अवश्य जानते होते। अब तक किसी ने इसकी चर्चा तक नहीं की है! इतना बहुत दिनों से सुनने में आ रहा है कि बिर नई गाँव के नाले से विरासपूर गांव के नाले तक कई एक गुफायें बनी हुई हैं। उनमें योगी रहते हैं परन्तु यह ऐसी बात है जिसे सब लोग नहीं जानते।"

कोलाहल—'यह किसी और जगह से आकर यहां रहता है और जहाँ तक समझ में आता है किसी से मिलता जुलता नहीं वरन् दो चार मनुष्य तो अवश्य ही उसे जानते होते।"

कालीचरना—'पता लेकर क्या करोगे! वह चाहे कहीं का रहने वाला हो। हमको अपने काम से काम है।"

दुर्जन—'यह काम मुझे सौंपो मैं न केवल उस योगी का पता लाऊँगा किन्तु तुम सब को उसके पास पहुँचा दूँगा।"

कोलाहल—'मैं भी तुम्हारे साथ रहूँगा। सबसे पहिले मुझ ही को उसका पता लगा था।"

कालीचरना—"मुझे न भूलना मैं बड़े काम का हूँ।"

गोगा—"मैं भी साथ रहना चाहता हूँ।"

कोलाहल—"अच्छी बात है। अब पाँचों मिल कर साथ रहेंगे।"

कालीचरना—"पाँच पंच मिल, कीजे काज।
हारे जीते नाहीं लाज॥"

गोगा—'मेरी तो यह सलाह है कि हम कई दिन तक मूँडादेव की मूर्ति के पीछे बैठ कर उस योगी की देख भाल करते रहें। यह कोई कठिन काम नहीं है। रात को यहां न सोये वहाँ ही जाकर सो रहे।"

कोलाहल—"इसमें कोई हर्ज नहीं है परन्तु मैं तो यह कहूंगा कि हम में से तीन मनुष्य तो मूँडादेव पर रहकर देखा करें कि योगी किस किस समय गुफा से बाहर आता है और वह सूवर कैसे उनके पास आ जाते हैं और दो मनुष्य रात के समय तालाब के किनारे हनुमान जी के देवल पर चढ़ कर बैठें और चुप चाप उसकी टोह लेते रहें। दूसरे दिन सब लोग अपना अपना हाल सुनायें। इससे हमें बड़ी सहायता मिलेगी।"

गोगा—"बहुत ठीक! एक सप्ताह तक कोई छेड़ छाड़ न की जाय ऐसा न हो कि वह बहक जाय। यदि कहीं और चला गया तो बना बनाया खेल बिगड़ जायगा।"

सब ने इसकी बात मान ली। दो मुसहर हनुमान जी के देवल पर रहने लगे और तीन मूँड़ादेव के पीछे जाकर ठहरे।

दूसरे दिन आधी रात के समय फिर सीटी में 'हुर्रे हुर्रे' का शब्द सुनाई दिया। सुवर निकले। योगी एक की पीठ पर

बैठा परन्तु आज तालाब पर नहीं आया, सीधा नाले की राह से गंगा की ओर चला गया क्योंकि बीच में और कहीं पानी का ठिकाना नहीं था।

दूसरे दिन यह मिले, अपना अपना हाल सुनाया। गोगा और दुर्जन देवल पर थे और तीनों मूँड़ादेव की मूर्ति के पास ठहरे।

गोगा--"रात को यह तालाब पर पानी पीने नहीं आये।"

दुर्जन--"हम सारी रात जागते रहे।"

कोलाहल—"वह इधर नहीं आये। गंगा की ओर चले गये क्योंकि और जगह पानी नहीं है। सारे तालाब सूख गये हैं।"

गोगा--"तो फिर क्या करना चाहिये?"

कोलाहल—"वह अब तालाब पर न आवेंगे क्योंकि योगी को छेड़ छाड़ से घृणा है। वह समझ गया है कि यहां लोग उसकी ताक में रहते हैं। तुम गङ्गा के किनारे किसी वृक्ष पर चढ़कर उनकी टोह लेते रहो।"

तीसरे दिन ऐसा ही किया गया। गोगा और दुर्जन तो बिरास पूर चले गये जो गङ्गा के किनारे हट कर बसा हुआ है और घाट के एक वृक्ष पर बैठ रहे।

रात को मूँड़ादेव पर तो वैसी ही घटना हुई और मुसहरों का विचार ठीक निकला। योगी ने गङ्गा पर जाकर पानी पिया और अपना कमण्डल भरा। जब पशुओं ने अपनी प्यास बुझाली वह फिर महादेव पर उन्हें साथ लाकर गुफा के अन्दर चला गया परन्तु यह सुवर सब बाहर खड़े रहे। योगी ने सीटी फिर बजाई। यह सीटी पहिली सीटी से भिन्न थी

मुसहरों ने उसे सुन लिया और उनकी समझ में भी आगया कि बुलाने की सीटी और है और लौटाने की और तरह की है।

चौथे दिन यह फिर मिले और आपस में बात चीत की।

पांचवे दिन कोलाहल को दूर की सूझी, गुफा के पास के वृक्ष पर चढ़कर सीटी में 'हुर्रे हुर्रे' किया। सुवर गुर्राते हुये आये उन्होंने फिर वापसी की सीटी बजाई और वह चले गये। ऐसा जान पड़ा कि इन सुवरों के रहने का गढ़ा पास ही था। इसीलिये वह सीटी सुनकर आते और चले जाते थे। ऐसे ही गंगा के किनारे भी मुसहरों ने इन सब को पानी पीते हुये पाया। दूसरे दिन जब इकट्ठा होकर बात चीत करने लगे गोगा ने समझाया कि सुवर सीटी सुन कर आते और चले जाते हैं इसका तो पता लग गया है परन्तु योगी ने कैसे इन पर अधिकार पाया है यह बात समझ में नहीं आती। क्या ही अच्छा होता कि तुम में से कोई जान पर खेल कर सुवर की पीठ पर चढ़ने का साहस करे। उस समय यह रहस्य भी खुल जायगा।"

कालीचरना सब में मन चला था। उसने कहा—"मैं अब ऐसा करूँगा। तुम लोग रस्सा लिये हुये मेरी सहायता के लिये चौकन्ने रहो। एक तो सुवर तीर की तरह सीधा जाकर धावा करता है। ऐसी दशा में यदि कोई राह से थोड़ा सा हट जाय तो वह सुवर से बच जाता है। दूसरे उसका यह भी स्वभाव है कि जब कोई मनुष्य पीठ पर सवार होजाय तो फिर उसे भागने और भाग निकलने के अतिरिक्त कुछ नहीं सूझती।"

छटवें दिन रात में १२ बजने से पहिले गुफा से हटकर

काली चरना ने सीटी बजाई और 'हुर्रे हुर्रे' किया। सुवर शब्द सुनकर बाहर निकले। यह साहस करके एक की पीठ पर बैठ गया। वह इसे लिये हुये तालाब पर पहुंचे। यह नीचे उतर पड़ा पानी पिया और जब यह पानी पी चुके तब वह फिर एक की पीठ पर बैठ गया। वह गुफा पर लाये। यह उतर पड़ा और लौट जाने की सीटी बजाई। वह चले गये। कोलाहल और दुर्जन ने उनका आना जाना अपनी आंखों से देख लिया। इन्हें भी साहस हुआ और फिर आधी रात से पहिले ही अपने २ घर चले आये।

सातवें दिन फिर सब मिलकर अपनी अपनी बातें सुनाने लगे। उस दिन यह बहुत ही प्रसन्न थे क्योंकि एक बहुत बड़ी बात का इन्हें पता लग गया और अब सफलता की आशा दिखलाई देने लगी।

रात हुई। यह निर्भयता के साथ बिरनई के नाले पर पहुँच कर गुफा के पास दबक कर बैठ रहे। आधी रात को सीटी का शब्द सुनाई दिया। सुवर निकल पड़े। योगी (या जो कुछ वह रहा हो) सुवर पर बैठा। कई सुवर थे। इन पाँचों मुसहरों ने भी वैसा ही किया। योगी ने उनको देख तो लिया पर कुछ बोला नहीं. गङ्गा के किनारे जाकर पानी पीने और कमण्डल भर कर लाने के पश्चात् गुफा पर लौट आया। यह भी चुप चाप हाथों में रस्सा लिये हुये सुवरों की पीठ पर बैठे हुये चले गये। जब वह गुफा में जाने लगा मुसहरों ने उसके सामने आकर राह रोक ली।

योगी ने पूछा—"तुम कौन हो और क्यों आये हो ?"

योगा आगे बढ़ कर बोला—'हम जाति के मुसहर हैं। गुरु की खोज थी। तुम हमारे गुरु होने के योग्य हो। बड़ी

कठिनाई से तुम्हारा पता पाया, रातों रात जागते रहे। आज हमारा भाग जागा। तुम मिल गये हमको अपना चेला बनाओ और धर्म कर्म की राह दिखाओ।"

योगी उनको अपने साथ मूँड़ादेव के पास लाया। यह जगह कुछ ऊँची और बराबर थी। वह बैठ गया और इन्हें भी बैठने के लिये कहा।

योगी -"तुम व्यर्थ ही यहाँ आये। यह अच्छा नहीं किया।"

गोगा—"क्यों ?"

योगी—"मुझे तुम्हारे गुरू होने का अधिकार नहीं है।"

गोगा—"क्यों ?"

योगी—"क्यों कि मैं स्त्री हूँ।"

गोगा—हम मुसहर हैं। स्त्री पुरुष में भेद नहीं मानते। यह लचर बातें ऊँची जाति वालों में हैं जो स्त्रियों को पुरुषों के पाँव की जूती समझते हैं। हम अपनी पूजा माई बापू कहकर करते हैं। हमारे यहाँ स्त्रियों का आदर और सम्मान पहिले किया जाता है फिर पुरुषों का ध्यान रहता है। कोई मुसहर 'बापू माई' नहीं कहता किन्तु 'माई बापू' ही कहने का रिवाज है।"

योगी—"पहिले ऊँची जाति वालों की भी यही दशा थी। उनके यहाँ भी माँ बाप कहने का रिवाज़ था। बाप माँ कोई नहीं कहता। अब वह रस्म जाता रहा। उन्होंने भी स्त्रियों को पाँव की जूती बना रक्खा है। यह सिल-सिला कब से चला इस का मुझे पता नहीं है। पहिले समय के नामों में स्त्रियों का नाम पहिले और पुरुषों का पीछे आता था जैसे सीताराम राधाकृष्ण गौरी शंकर,

उमाशंकर, लक्ष्मी नारायण इत्यादि इत्यादि" अब यह दशा नहीं रही। पुरुष अच्छे बन बैठे और स्त्रियाँ बुरी बन गईं।"

गोगा—"यह और भी अच्छी बात है कि हमारा तुम्हारा मेल इन बातों में पाया जाता है।"

योगी हँसा—"यह सब तो ठीक है परन्तु तुम मुझे अपना गुरु न बनाओ। किसी पुरुष की खोज में लगो।"

गोगा—"अब यह सम्भव नहीं है।"

योगी—"क्यों?"

गोगा—"एक तो हम को खोज में बड़ा परिश्रम करना पड़ा है। दूसरे तुम में वह सारे लक्षण हैं जो गुरु में होना चाहिये। तीसरे हमारे और तुम्हारे विचार मिलते जुलते हैं। चौथे ऊँची जाति वालों के दुर्व्यवहार से हम तंग आगये हैं क्योंकि उनकी दृष्टि में हम महा नीच और अधम हैं। पाँचवें हमको कोई ऊँची जाति वाला अपना चेला न बनायेगा और हमको उसकी इच्छा भी नहीं है।"

योगी—"तुम सीधे सच्चे लोग हो। सचाई और सादगी विचित्र वस्तु है। मुझे तुम्हारे साथ सच्ची सहानुभूति है परन्तु यह तो बताओ कि यदि किसी ने तुम से कह दिया कि ऊँचि जाति की हूँ तो क्या तुम्हें घृणा न होगी?"

कोलाहल—"क्या तुम्हारा सम्बन्ध ऊँची जाति वालों से है?"

योगी—"हाँ! पहिले मैं ऊँची जाति की थी। अब मैं अपने आप को ऊँची जाति की नहीं समझती और न उनका मुँह देखना चाहती हूँ। यह बड़े ही नीच और पतित हो गये हैं। मुझे इनके नाम से चिढ़ है।"

दुर्जन—"बड़ा अच्छा हुआ, गुरु मिल गया और हमारे

और उसके विचार एक जैसे हैं।"

योगी—"अच्छा हुआ या बुरा यह तो मैं जानती नहीं। हां! इतना समझती हूँ कि यह सब मौत के मुँह में हैं और थोड़े ही दिनों में मर मिटने वाले हैं। इन्हों ने अत्याचार और अन्याय ही को अपना धर्म समझ लिया है। इन से बचकर रहने ही में भलाई है। जिस किसी को इन की छूत लग जायगी वह भी रसातल को जायेगा।'

योगी—"हमारा भी यही विचार है। अब हमको अपना चेला बनाओ।"

योगी--"इतनी व्यग्रता से काम मत लो। गुरु कीजे जानकर, पानी पीजे छान कर, यह बड़ी पुरानी कहावत है,"

कोलाहल—'तो कब हमको अपना चेला बनाया जायगा?"

योगी—"पहिले मैं तुमको समझाऊँगी कि गुरु और चेले के सम्बन्ध क्या हैं। साथ साथ यह भी बताऊँगी कि कोई क्यों किसी का चेला होता है और चेला होने का मुख्य उद्देश्य क्या है।"

कोलाहल—"स्वामी दयानन्द मिले। हमको समझाया कि ईश्वर की पूजा करो। यह बात हमारे मन में बैठ गई। मुसद्दरों का जल्सा हुआ। बुद्धा सरपंच था। उसने बताया कि बिना गुरु के ईश्वर की भक्ति नहीं हो सकती और हम गुरु की खोज में लग गये।"

योगी—"स्वामी दयानन्द सच्चे! बुद्धा सच्चा! और तुम सब के सब सच्चे! इसमें नाम मात्र भी सन्देह नहीं है कि ईश्वर की भक्ति बिना गुरु के नहीं हो सकती। तुम ऐसा करो। रात में इसी जगह बराबर आया करो। मैं यहीं

मिलूँगी और शिक्षा दे दे कर तुमको अपना चेला बना-ऊँगी।"

मुसहरों ने उसकी बात मान ली। योगी या योगनी तो गुफा में चली गई और मुसहर बाग में लौट आये।

सातवाँ अध्याय

हलचल

पाँचों मुसहर नित्य मूँड़ादेव पर जाने लगे। फिर इनकी देखा देखी और भी उनके साथी बने और योगिनी नित्य उन्हें सत्संग कराने लगी। ऐसी बात छुप नहीं सकती थी। आस पास के सारे गाँव वालों को पता लग ही गया कि मुसहरों को कोई योगी मिल गया है और उसने उन्हें न केवल अपना चेला बना लिया है किन्तु नित्य आधी रात के समय सत्संग भी कराया करता है। पहिले तो पाँच ही मुसहर उसके चेले हुये थे और अब उनकी बड़ी जत्था मूँड़ादेव पर जाया करती है। दूसरे हिन्दू तो बे परवाह थे परन्तु कुछ नवयुवक ब्राह्मणों को आश्चर्य हुआ। वह मुसहर से मिलकर पता लेने लगे और इस धुन में हुये कि किसी प्रकार उस योगी तक पहुंच जाँय।

मुसहर ने पहिले तो इस भेद को छुपाया परन्तु चेलों

की संख्या बहुत थी इस लिये यह भेद छुपा न रह सका। मूँड़ादेव का नाम ही सुनकर इन में बेचैनी फैल गई क्योंकि यह पहिले भी सुन चुके थे कि विरनई के नाले में एक आध योगी रहते हैं। योगी के नाम में जादू है। जो सुनता है बिना जाने बूझे योगियों के पीछे लग जाता है। यही कारण है कि योग विद्या आज ठग विद्या बन गई है और सीधे सादे लोग लूटे जाते हैं।

कई दिन तक यह नाले की गुफा में ढूढ़ते रहे परन्तु सफलता प्राप्त नहीं हुई। फिर यह सलाह ठहरी कि कुछ लोग आधी रात को मूँड़ादेव पर चलकर देखें कि क्या होता है और वह कौन सा योगी है जो मुसहरों का गुरु बन बैठा है।

मुसहर मूँड़ादेव पर जाकर गुरु का सत्संग किया करते थे। एक रात को वह वहाँ बैठे हुये थे कि हाथ में मशाल लिये हुये ब्राह्मणों का झुण्ड वहाँ पहुँच गया। योगी इनके बीच में आसन मार कर नंगा बैठा हुआ गँवारी भाषा में उन्हें समझा रहा था। सब के सब ऐसे एकाग्र चित होकर गुरु के बचन को सुन रहे थे कि उन्हें ब्राह्मणों के आने का पता तक न चला। ब्राह्मण खड़े होगये न दण्डवत न प्रणाम आते ही मुसहरों को डांटने लगे – 'यह हमारी पूजा की जगह है, देव स्थान है। यहाँ मुसहरों का क्या काम! तुमने इस जगह को अपवित्र कर दिया। तुमको यहाँ आने की आज्ञा किसने दी?"

मुसहरों के सतसंग के समय यह छेड़ छाड़ बुरी लगी। उनके तीवर बदल गये। यह स्वाभाविक सीधे सादे होते हुये जंगली और अभय होते हैं। क्रोध आने पर यह किसी

से नहीं डरते। फिर भी गुरु के पास रहने से इन्होंने अपने आप को बहुत सँभाल रक्खा।

योगी को आप उन से बात चीत करनी पड़ी—'तुम कौन हो जो यहाँ आ धमके और इन बेचारों को सताने लगे ?"

ब्राह्मण बोले—"यह इनके आने की जगह नहीं है हम बराबर सुनते आ रहे थे कि मुसहरों की जमघट मूँड़ादेव पर रहती है। आज अपनी आँखों से देख रहे हैं अब यह जगह इनके बैठने से अशुद्ध होगई।"

योगी—यह जगह इन से अपवित्र नहीं हुई हाँ तुम्हारे आने से निस्सन्देह अपवित्र होगई। तुम देखते हो कि यह मूड़ादेव की पिंडी से हटकर बैठे हुये हैं। तुम्हें कोई हानि तो नहीं पहुँची।"

ब्राह्मण—"यह अच्छी बात कही। हम ब्राह्मण होकर अपवित्र हैं और यह मुसहर होकर पवित्र हैं।"

योगी—"यह सच्ची बात है जिस में क्रोध और घृणा है वह अपवित्र हैं और जिनका चित्त इनसे बचा हुआ है उनके शुद्ध और पवित्र होने में क्या सन्देह है !"

ब्राह्मण—"तुम मुसहरों का पक्ष लेते हो।"

योगी—"न्याय का ध्यान रखना मनुष्य का कर्त्तव्य है।"

ब्राह्मण—"यह पृथ्वी किसकी है ?"

योगी—"ईश्वर की है।"

ब्राह्मण—"ईश्वर तो सारे संसार का मालिक है। यह मन्दिर हमारा है।"

योगी—"यह मन्दिर नहीं है। यहाँ मैदान में वृक्ष के नीचे केवल महादेव जी का एक लिंग रक्खा हुआ है। यदि यह

मन्दिर होता तब भी मुसहरों को यहाँ आने का अधिकार था क्योंकि ईश्वर किसी एक का नहीं है। वह सबका मालिक है। मुसहरों ने यहां आने में कोई अपराध नहीं किया। क्या तुम इनसे लड़ने आये हो ?"

ब्राह्मण—"आज इस समय तुम इनके पक्ष पाती बने हो। कल दिन के समय कौन इनकी सहायता करेगा ?"

योगी—'इनका सहायक ईश्वर है।"

ब्राह्मण—"यह ईश्वर को कब मानते हैं। यह तो माई बापू माई बापू करते हैं और मुरदों से प्रार्थना करते है।"

योगी—'तुम आप क्या करते हो ? जैसे वह वैसे तुम।'

ब्राह्मण—"हम ईश्वर के मानने वाले हैं।"

योगी—'यह मुसहर भी ईश्वर के मानने वाले हैं।"

ब्राह्मण—'तुमने हमारी उपमा उन से क्यों दी ?"

योगी—"यह वाद विवाद की जगह नहीं है। यदि समझ बूझ वाले हो तो सोचो—जैसे यह मुसहर अपने पूर्वजों की आत्मा को पूजते हैं वैसे ही तुम भी राम कृष्ण आदि को मां बाप समझ कर पूजते हो। तुमने मन्दिरों में उनकी मूर्तियाँ बना रक्खी हैं और धर्म को गुड़िया गुड्डों का खेलकर रक्खा है। मुसहर तो तुम से फिर भी अच्छे हैं। इनके पास न मन्दिर है न मूर्तियाँ। वह चित्त से ईश्वर की पूजा करते हैं।"

ब्राह्मण—'तो मुसहर अच्छे और ब्राह्मण बुरे।"

योगी—"मैं किसी को क्यों बुरा भला कहूं ! तुम आप सोच समझ सकते हो।"

ब्राह्मण—"अच्छा जो हुआ वह हुआ ! अब तुम अपने चेलों को समझा दो यहां जमघट न हो। अपने लिये कोई और

जगह ढूढें।"

योगी कहने ही को था कि ऐसा ही किया जायगा। इतनेमें कोलाहल बोल उठा—"नदी नाले पर किसी एक का अधिकार नहीं होता यह राजा की जायदाद है। किसी को क्या अधिकार है कि हमको ऐसी जगह पर बैठने से रोके!"

ब्राह्मण—अरे तू बड़ा कानून जाननेवाला बना हुआ है! कि ऐसी बातें कर रहा है। क्या तुझे भय नहीं है।"

कोलाहल—सच्ची बात लाल मिर्च जैसी कड़ुई लगती है। जब हम तुम्हारे धर्म कर्म में रोक टोक नहीं करते तो फिर तुम क्यों हमारे पीछे पड़ते हो!"

ब्राह्मण—"अच्छा मुँह सँभाल कर बात चीत करो नहीं तो यहाँ रहने न पायेगा।"

कोलाहल—"हम सबतो गुरु के यहाँ सत्संग कर रहे हैं। तुम अपने घर जाओ। तुम्हारा काम नहीं है।"

ब्राह्मणों का क्रोध भड़क उठा. वह लठबन्द होकर आये थे लड़ने के ध्यान से तो वह आये नही थे परन्तु ऐसे अवसर पर साधारण बात चीत में लड़ाई हो जाती है। ईश्वर जाने इस धर्म को घुट्टी में कैसा विष डाला गया है जो थोड़ी थोड़ी सी बातों पर उबल जाता है और जान लेकर चैन लेता है।"

योगी को सन्देह हुआ कि कहीं बात बात में मुसहर और ब्राह्मण लड़ न पड़ें। ब्राह्मण यहां के जमीदार हैं इनका पल्ला भारी है। मुसहर उठल्लू के चूल्हे हैं न घर है न द्वार न खेत न बाड़ी! इस लिये सोच समझकर उसने कहा—"तुम चाहते हो कि मुसहर यहाँ न आयें। कल से यह न आयेंगे। अब बात का बतंगड़ा क्यों बनाया जा रहा है। इसका प्रबन्ध होजायगा। अब तुम जाओ रात का समय है। सो रहो!"

ब्राह्मण—'यह मुसहर दयानन्दी होने लगे हैं। इनकी जड़ अभी से काट देनी चाहिये। ऐसा न हो कि यह ऊधम मचायें। तुम योगी हो इन्हें समझाओ कि दून की न लें नहीं तो लेने के देने पड़ेंगे।"

योगी—"दयानन्दी तुम किसको कहते हो?"

ब्राह्मण—"जो सन् सनातन धर्म का निन्दक हो मूर्त्ति पूजा का खंडन करे। पुराने रस्म और रिवाज की जड़ उखेड़े। एक मनुष्य दयानन्द नाम का प्रकट हो गया है जो हिन्दू धर्म का शत्रु और विरोधी है। बनारस के पंडितों ने उसकी बड़ी दुर्गति की। अब वह जगह जगह विष उगलता फिरता है।"

योगी—'मैं ने यह नाम अब तक नहीं सुना। यह मुसहर ऐसे नहीं हैं। यह मेरे चेले हैं। मैं इन्हें समझा बुझा लूँगा। इनको तुम्हारे धर्म कर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है।"

ब्राह्मण—"तुम कैसे योगी हो जो मुसहर को अपना चेला बनाते हो। रंग रूप से तो किसी ऊँचे कुल के जान पड़ते हो। फिर इन अछूतों से तुम्हें क्या सम्बन्ध रहा? क्या कहीं तुम भी तो दयानन्दी नहीं हो? अभी तुम्हारी अवस्था बहुत कम है। अच्छा हो कि इन्हें मुँह न लगाओ।"

योगी—"मैं दयानन्दी नहीं हूँ। इन से सम्बन्ध रखना और बात है।"

ब्राह्मण—"बहुत अच्छा! तो हम यहाँ बैठते हैं. देखें तुम इनको क्या उपदेश देते हो।"

योगी—'इसकी आज्ञा नहीं है। चले जाओ। तुम्हारे सामने मैं इनको शिक्षा नहीं दूँगा क्योंकि योग सम्बन्धी बातें सब के सामने नहीं कहीं जातीं। इसी लिये रात का समय

अच्छा समझा जाता है। योगी दिन को सोते और रात को जागते हैं। यह तुम ने सुन रक्खा होगा।"

ब्राह्मण हँसे—"इस समय तो हम यहाँ से टलने वाले नहीं हैं।"

योगी—"तुमको जाना पड़ेगा। यदि सुगमता के साथ नहीं जाते हो तो तुम्हें हार मानकर जाना पड़ेगा।"

ब्राह्मण—"भला देखें तो सही कौन हमें यहाँ से भगाता है। ब्राह्मण और मुसहरों से भागें! यह कैसे हो सकता है!"

योगी हँसा– "जाति अभिमान हर जगह काम नहीं देता।"

उसने उसी समय सीटी में 'हुरें हुरें' कहा! बहुत से जंगली सुवर पानी से निकल पड़े और उस मैदान में आकर खड़े होगये। योगी ने फिर दूसरी सीटी बजाई। कई पुराने बड़े बड़े और भयानक भेड़िये हांपते हुये और जबान निकाले हुए वहाँ पहुंच गये।

योगी ने ब्राह्मणों से कहा–"तुम समझते हो हम अबल हैं। यह तुम्हारी भूल है। यह सूवर और भेड़िये अभी भीगी बिल्ली बने हुये हैं। आँख उठाने की देर है। यह अभी दम के दम में तुम जैसे पचासों को चीड़ फाड़ कर चट कर जायेंगे। इस लिये अब सीधे २ चले जाओ। कल से यहाँ कोई मुसहर न आयेगा। मैं तुम लोगों का दिल दुखाना नहीं चाहता।"

ब्राह्मण भयभीत होगये और अपना सा मुँह लेकर चले गये।

दूसरे दिन आस पास के गाँव में इस घटना के सुनने से बड़ी हल चल मच गई।

आठवाँ अध्याय

कलियुग आगया

ब्राह्मणों के चले जाने पर योगी और मुसहरों में क्या बात चीत हुई होगी इस का अनुमान लगाया जा सकता है। दूसरे दिन स्थान बदल देने की बात हुई होगी क्यों कि फिर मूँड़ादेव पर मुसहर इकट्ठा नहीं हुये और अब तक भी वहाँ नहीं जाते। कोई दूसरी जगह चुनी गई होगी परन्तु रात की घटना से ब्राह्मणों के छक्के छूट गये। इनकी बातों को सुनकर लोगों के कान खड़े हो गये।"

राम लोचन कोड़रिया दूबे ने कहा—'योगी मुसहरों का पक्षपाती है। उनके साथ बैठता और उन्हें छूता है।"

नयनसुख पाँडे—"राम! राम!! कलियुग आगया। यह योगी कैसा है?"

शिव मूरत दीक्षित—"गोरा रंग, बड़ी बड़ी आँखें, चौड़ा ललाट, लम्बे बाहु। मुख से ब्रह्मचर्य्य का तेज बरसता है निडर और अभय है उसने कोई बात क्रोध में नहीं कही। इससे पता लगता है कि उसमें सहन शक्ति बहुत है।"

"वह सचमुच योगी होगा! अवस्था क्या है?"

"यही कोई १५—१६ वर्ष या इस से भी कम।"

"तो अभी लड़का है गले में जनेऊ है या नहीं?"

"हमने नहीं देखा। वह एक दम नंगा रहता है और पृथ्वी पर सिद्ध आसन लगाकर बैठता है। सूत का एक धागा उसके शरीर पर नहीं है।'

"दत्तात्रेय अवधूत का अवतार मैं। हाथ में मनुष्य की खोपड़ी का प्याला भी रहा होगा।'

नहीं! सूरवे कद्दू का कमण्डल पास रक्खा हुआ था। उसी में पानी पीता होगा।'

'रूप रंग से किस देश का रहने वाला जान पड़ता है?"

हमारे ही देश के मनुष्यों जैसा है?'

"रेख भीनी हुई है या नहीं?'

"नहीं कुछ भी नहीं! स्त्रियों जैसी सूरत वाला है।"

"मोटा है या दुबला पतला?"

'न मोटा है न दुबला पतला है न लम्बा है न नाटा है।'

उस भीड़ में एक बीस वर्ष का नवयुवक बैठा हुआ था। वह योगी के रंग रूप का हाल सुनकर चिल्ला उठा और पृथ्वी पर गिरकर मूर्छित होगया। सब लोग घबरा गये, लोटे में पानी मँगाकर मुँह पर छींटे मारे, कपड़े से पंखा किया। कुछ देर पीछे उसे चेत हुआ। लोगों ने पूछा--"क्या दशा है?" उसने कहा—'कुछ नहीं। मूर्च्छा थी जाती रही। कोई चिन्ता की बात नहीं है। मुझे प्रायः ऐसा होजाया करता है। अब अच्छा हूं।'

इस युवक का नाम नरसिंह भान था उसने आचार्य

परीक्षा पास की थी। देखने में सुन्दर सुडौल। भीमपुर का रहने वाला ब्राह्मण था। उसका स्वास्थ्य बिगड़ गया था। कभी २ चिल्लाकर मूर्च्छित हो जाता था। लोग समझते थे कि इसे मिरगी का रोग होगया है।'

जब नरसिंह भान का चित्त सँभला फिर पूछा पेखी होने लगी।

"योगी का सर गुथा हुआ है या वह केशधारी है।'

'न वह मुड़मुण्डा है न जटा जूट वाला है। उसके केश कमर तक लटकते रहते हैं और हवा के लगने से फरा उठते हैं।'

वह किस योग की शिक्षा देता है।'

"इसका पता हमको नहीं लगा और न इस विषय पर उसने कोई बात चीत की। उसकी बातों से इतना पता लग सका है कि वह योगी है। कहता था कि मैं दिन को सोता हूँ और रात को जागता हूं और योग के विषय पर किसी के सामने बात चीत नहीं करता।,

सुबच्चन पाँडे बीच से बात को काट कर बोल उठा— "तुम उसकी बातें कैसे सुनते! तुमने तो जाते ही छेड़ छाड़ कर दी। गये थे योगी के पास उसका दर्शन करना और उपदेश सुनना था। तुम ने तो उलटे खड़े खड़े झगड़ा मोल लिया और तुम्हें मुँह की खानी पड़ी।,

रामनिवास— 'झगड़ा कैसे मोल लिया?"

सुबच्चन— "यह डाट डपट के साथ योगी से कहते थे कि मुसहरों को न छुयें और न उन्हें मूँड़ादेव पर बैठने दें। योगी ने इसपर भी इन्हें समझाया कि यह मेरा निज काम और व्यवहार है तुम अपने घरों को जाओ और छेड़ छाड़ मत करो।

यह हट कर बैठे। उसने अपनी योग विद्या से जंगली सूअर और भेड़ियों को बुलाया। वह आये और इनको वहाँ से भागना पड़ा।"

वह महा अनुचित हुआ। ऐसा नहीं करना चाहिये था।"

"हम क्या करते! हम नहीं चाहते थे कि मुसहरों को कोई ऊँची जाति वाला अपना चेला बनाये।"

"तुम इसी बात को मेल मिलाप के साथ समझा सकते थे।

'हम से भूल हो गई। अब तो जो होना था हो चुका।'

तो अच्छा! आज फिर चलो। हम सब लोग भी योगी के दर्शन को चलेंगे और उसे समझायेंगे।'

'योगी न मुसहरों से कहा था कि कल से यहाँ न आना। इसलिये वहां उसका दर्शन पाना कठिन है।

'वहाँ नहीं तो और जगह सही। मुसहरों से उसका पता मिल जायगा।'

"यह मुसहर उसके सच्चे भक्त हैं। मरते मरते मर जायेंगे परन्तु किसी को उसका भेद न दे'गे वह इन्हें क्या सिखाता है। यह भी एक रहस्य है।'

'अजी! जब वह यहाँ रहता है तो मिलकर ही रहेगा।"

"रहने को तो वह यहाँ सालों से रहता होगा। आज तक किसी को पता नहीं था। न इन मुसहरों को गुरू की खोज होती न उसका किसी को पता मिलता।'

फिर क्या करना चाहिये। कोई बात समझ में नहीं आती।'

"हम चल कर कभी कभी नाले की गुफाओं की ताक झाँक

करते रहेंगे। कभी न कभी मिल ही जायगा।"

"परन्तु इन मुसहरों को शिक्षा देना महा अनुचित है।"

"हमारे घर की विद्या घर ही में रहे। दूसरों तक न पहुँचे यह ब्राह्मणों का सनातन से सिद्धान्त चला आता है।"

"वह समय लद गया। अब कलियुग है। इसमें ऐसी ही बातें होंगी जिनको पहिले कोई जानता भी नहीं था। सूखा और काल पड़ेगा। लोग दुखी रहेंगे। छोटी जाति वाले ऊँची जाति वालों के मुँह आयेंगे। ब्राह्मण नीचे बैठेंगे और शूद्र ऊँचे बनेंगे जाति पांति का किसी को ध्यान तक न रहेगा। वरण संकर सन्तान उत्पन्न होगी। आयु कम होगी चटते २ मनुष्य एक फुट के हो जायेंगे। वृक्षों की भी यही दशा होगी। अन्त में सात २ वर्ष की लड़कियों के बच्चे होंगे। जब सब भ्रष्ट हो जायेंगे और धर्म लोप हो जायगा तब कलंकी अवतार होगा और सब को मार कर नाश कर देगा। फिर नई सृष्टि होगी और सतयुग आयेगा। तब कहीं ब्राह्मणों की उन्नति होगी और उन के दिन फिरेंगे।"

"जब ऐसा होने वाला ही है तो फिर ब्राह्मणों को बुरा न मानना चाहिये।"

"जीते जी कोई अपनी नाक पर मक्खी नहीं बैठने देता। इसलिये अब जब धर्म कर्म की हानि होने लगती है। ब्राह्मण अपनी जान लड़ा देते हैं।"

"यह रोक टोक कब तक चलेगी?"

"यह तो पटहार का जाप ठहरा।"

"पटहार का जाप क्या होता है?"

"सुनो:—

कोई पटहार मालदार था। उसके घर में रुपये पैसे की

कमी नहीं थी। साथ ही साथ धर्मात्मा भी था परन्तु था नीची जाति का। नीची जाति में धर्मात्मा लोग उत्पन्न हों इस में भी ब्रह्मा की भूल होगी। ऐसा होना नहीं चाहिये था। यह विशेषता केवल ब्राह्मणों के लिये थी। जो हो पटहार धर्मात्मा था। एक अनपढ़ ब्राह्मण इसके यहाँ नौकरी की खोज में गया। पटहार ने कहा— 'मेरे यहाँ इस समय नौकरी नहीं है। मंदिर में जाकर जाप किया करो।" वह मान गया, मन्दिर में गया और लगा चिल्लाने—"मैं पटहार का जाप करूँ! मै पटहार का जाप करूँ!" दूसरे दिन दूसरा ब्राह्मण आया पटहार ने उसे भी जाप का काम दिया। वह मन्दिर में गया। पहिला ब्राह्मण कह रहा था— 'मैं पटहार का जाप करूँ मैं पटहार का जाप करूँ!' उसने भी अपनी सुर अलापी-'जो तू कहै सो मैं भी करूँ!' जो तू करै सो मैं भी करूँ! संयोग वश एक तीसरा ब्राह्मण भी पहुंचा। यह भी जाप में लगाया गया। जब पहिले दो अपना मंत्र जप लेते तो यह निराली धुन की हाँक लगाता- 'यह चलेगी कब तक। यह चलेगी कब तक' फिर चौथा ब्राह्मण नौकरी की खोज में आ धमका। इसे भी मन्दिर में जाप का काम सौंपा गया। जब तीसरा अपने मन्त्र को समाप्त करता तब यह कहने लगता—'जब तक चलेगी तब तक! जब तक चलेगी तब तक!' इस तरह मन्दिर में पटहार का जाप होने लगा। एक दिन पटहार के मन में आया कि चलकर देखना चाहिये चारों ब्राह्मण कैसा जाप कर रहे हैं। वह आया। यह जप में लगे थे। पहिला कहता था - 'मैं पटहार का जाप करूँ! मैं पटहार का जाप करूँ!' दूसरा बोलता था—'जो तू करे सो मैं भी करूँ जो तू करे सो मैं भी करूँ' तीसरे ने यह राग छेड़ दिया था-'यह चलेगी कब तक? यह चलेगी कब तक?' चौथा

इस तिताले मन्त्र को इस चौथे मत्र से पूरा करके चोताला बना रहा था —'जबतक चलेगी तबतक ? जब तक चलेगी तब तक !' पटहार मन में लज्जित हुआ। ऐसा निराला जाप उसने कभी नहीं सुना था। अपना सा मुँह लेकर घर लौट आया और दोपहर को उन्हें बुलाकर दान दक्षिणा देकर कहा— 'तुम्हारा जाप ठीक है। जाप हो चुका। अब अपने २ घर जाओ जब नौकरी होगी तब आजाना।' यही दशा ब्राह्मणों की है। यह धार्मिक रोक थाम पटहार के जाप की तरह कर रहे हैं। इसका परिणाम कुछ होगा नहीं। हाँ यह अपनी सी करते हैं और करते रहेंगे।

"क्या यह रोक थाम न करनी चाहिये ?"

"चाहे जो हो ब्राह्मण मानने वाले नहीं हैं।"

"कलियुग आगया। जब कोई ब्राह्मणों को न पूछे तब समझना चाहिये कि कलियुग आ गया। अन्धेर हो गया। मुसहर योग विद्या सीखने लगे। कलियुग नहीं तो यह क्या है ?"

'इस राम रौले में न पड़ो। अपना काम बनाओ। बहुत दिनों पीछे यहाँ योगी का नाम सुनने में आया। तुमको चाहिये कि यदि अपना काम बनाना है तो काम बना लो। दूसरों से तुम्हें क्या पड़ी है !'

'गंगा बह रही है। बहती हुई गंगा में यदि नहाते नहीं तो हाथ मुँह धोकर पानी तो पी लो। इस से कुछ न कुछ लाभ ही होगा।'

'सच्ची बात है – अपनी ओर निहारिये औरों से क्या काम ❀ सकल देवता त्याग कर भजिये गुरु का नाम।'

'कौन जाने अब इस योगी का दर्शन भी तुमको मिलेगा

था नहीं ! तुम बुरी तरह चूक गये। व्यर्थ ही मुसहरों के फेर में पड़े। ब्राह्मण थे। ब्राह्मण की तरह उससे कुछ सीख कर कमाई में लग जाना था। यह तुम ने क्या किया? अच्छा नहीं किया।'

'तो अब बताओ क्या करना चाहिये!'

'तुम में से कोई ढूँढ़कर उसका पता लगाये, क्षमा मांगे और ऐसा प्रबन्ध करे कि ब्रह्मणों को उस से लाभ पहुँचे। यदि मुसहर अपना काम बना रहे हैं तो तुम्हारा क्या बिगड़ता है।'

कई नवयुवकों ने कहा कि हम लोग खोज निकालेंगे।

नरसिंहभान—'अच्छा होता कि तुम लोग इस फेर में न पड़ते। तुम लोग हट धर्म्मी और कट्टर हो! मुझे अकेला यह काम करने दो। मैं अवश्य उसका पता लगाऊँगा।'

यदि कहीं खोज के समय उन्हें मिरगी होगई तो क्या करोगे? नदी नाले का काम है। जंगली पशु वहां भरे पड़े हैं वह ऐसी दशा में तुमको खा जायेंगे और हम लोगों को पता भी न मिलेगा।'

नरसिंहभान हँसा—'अच्छा! तो फिर जो जी में आये वह करो। तुम्हारे लिये तो कलियुग आया हुआ है। मैं अपने सतूयुग को लौटा लाऊँगा।'

नवां अध्याय

नरसिंहभान

जो ब्राह्मण हटधर्म्मी थे वह क्रोध से जल भुनकर घर बैठ रहे। फिर तो मुसहरों से रोक टोक की और न योगी के फेर में पड़े। कई नवयुवकों को उसके पता लगाने का ध्यान हुआ। सात आठ दिन तक वह बराबर बिरनई से लेकर विलास पूर तक चक्कर लगाते रहे परन्तु कुछ भी पता न चला—यहाँ तक कि उनको नाले से लेकर गंगा के किनारे तक कोई गुफा दिखलाई नहीं दी। वह घबरा गये और थक थका कर बैठ गये जब कोई हाल चाल पूछता जब यह उत्तर देते—'अजी! यह सब गप है न कहीं योगी है न यती है। मैंने बहुत सर मारा। इधर गया उधर गया, पूछ ताछ की। कोई पता नहीं लगा।'

"अच्छा! यह तो कहो कि मुसहर किसी गुरु के चेले हुये या नहीं?'

'वह चुप रहते हैं न हमारी बात उनकी समझ में आती है न उसकी हमारे।'

इतने ब्राह्मणों ने इस घटना को अपनी आँखों से देखा था। वह सब के सब झूटे तो नहीं हैं।'

हम तो इसे गप ही समझते हैं। सम्भव है इन लोगों ने स्वप्न देखा हो!'

"सब के सब एक ही स्वप्न नहीं देखते।'

कुछ देखा होगा। सभी जानते हैं कि बिरनई का नाला भूतों का डेरा है। कोई विचित्र बात देखी होगी और

डर कर भागे होंगे। इसी को बात का बतँगड़ा बना रहे हैं। एक हाथ ककड़ी के नौ नौ हाथ बीज! यह पुरानी कहावत है।'

"ऐसा कभी हो नहीं सकता।"

'क्या तुम कभी रात को वहाँ गये थे।"

"हाँ! गये थे। हमको कुछ नहीं दिखाई दिया। भूत उन को दिखलाई देते हैं जिन के मन में भ्रम होता है। जो भ्रम से बचे हुये हैं भूत उनके पास फटकते तक नहीं।'

"क्या तुम इस योगी के प्रकट होने को भूत पिशाच का खेल समझ रहे हो।'

"हमारा तो यही विचार है।'

इस खोज निकालने वाली जत्था से कुछ हो नहीं सका। दो एक सप्ताह के पीछे लोग इस घटना को भूलने लगे। संसार भूल भुलाइयां हैं। जैसे स्वप्न की बातें भूल जाती हैं वैसे ही जागृत की बातों की भी दशा है। इस भूलने के स्वभाव को मालिक की दात समझो क्योंकि यदि ऐसा न होता तो मनुष्य घबरा कर मर जाता।

भीमपूर गाँव में केवल नरसिंह भान ही ऐसा था जिसने इन बातों को दिल में जगह दे ली। उस में शान्ति के साथ साथ गम्भीरता भी थी। वह स्वभाव का गहिरा था। उसमें छिछलापन नहीं था जो उबल पड़ता। वह देख रहा था कि नवयुवक मण्डली क्या करती है। इनकी असफलता को सुनकर इसने खोज लगाने की ठान ली। भीमपूर और बिरनई के नाले के बीच में डेढ़ फरलाँग की दूरी है। वह रात के समय उठता और मूँड़ादेव पर जाकर

घंटों बैठता था। कभी २ वह गुफा में भी छान बीन करता रहता था। बहुत दिनों तक इसे सफलता नहीं हुई परन्तु वह न घबराया न उकताया। इतने में जेठ और असाढ़ का महीना बीत गया, बरसात का दिन आगया। मेंह की झड़ी लगने लगी। गंगा में बाढ़ आई। नदी नाले भर गये, आने जाने की राहें बन्द होगईं परन्तु यह नरसिंहभान ही का कलेजा था कि उन दिनों भी वह नाले को तैर कर पार कर जाता और घंटों चुपचाप मूँड़ादेव पर बैठा रहता था। एक दिन वह क्या देखता है कि कोई लड़का ठीक दोपहर के समय जब पानी बरसना थम गया था भेड़िये की पीठ पर बैठा हुआ मूँड़ादेव के पास से निकला। यह डरा परन्तु चुपचाप दबका हुआ बैठा रहा। भेड़िया लड़के को ठाकुर सूरज नारायण सिंह के बाग में लाया। वह उतर पड़ा और भेड़िया वहां से चम्पत होगया। वहां वृक्षों पर कई बन्दर बैठे हुये थे। वह नीचे उतरे। इनके हाथ में एक एक दो दो आम के फल थे जो इन दिनों में नहीं मिलते। केवल किसी किसी वृक्ष पर कोई कोई फल लगे रह जाते हैं। बन्दरों में यह फल लाकर लड़के के सामने रक्खा और सब के सब पेड़ों पर चढ़ गये। नरसिंहभान टकटकी बाँधकर ध्यान से देखता रहा। उसे विश्वास होगया कि यह लड़का नहीं है किन्तु लड़की है। इसका साहस बढ़ा, जगह से उठा और उसकी ओर चला। लड़की आम उठाने में लगी हुई थी। उस पर इसकी दृष्टि नहीं पड़ी। यह पास पहुंचा। पाँव की आहट पाकर लड़की ने सर उठाकर देखा नरसिंहभान के मुँह से निकल गया—"गायत्री! तू यहाँ कहाँ?" लड़की ने दो चार सकेन्ड तक उसे देखा और बिना उत्तर दिये आम उठाकर नाले की ओर भाग निकली। इसने चाहा कि पीछा

करे। इतने में वृक्षों पर बैठे हुये बन्दरों ने किलकारी लगाई। यह डरा कि कहीं वह इसको काट न खायँ क्योंकि उसने सुन रक्खा था कि योगी ने जंगली पशुओं को वशीभूत कर रक्खा है।

लड़की तो भाग गई और मालिक जाने कहाँ जाकर छुप रही। यह हक्का बक्का खड़ा रह गया और सारे बन्दर दांत निकालकर इसकी हँसी उड़ाने लगे।

पता लग गया कि लड़की ही योगी है और जो कुछ ब्राह्मणों ने उसके विषय में कहा था एक दम सत्य था।

वह उस दिन देर तक वहां बैठा रहा परन्तु लड़की नहीं आई। जब दिन डूबने लगा इसने तैर कर नाले को पार किया और अपने घर पर चला आया।

दसवां अध्याय

गायत्री

अँखियाँ तो झाईं पड़ी, पन्थ निहार निहार।
जिह्वा तो छाला पड़ा, नाम पुकार पुकार॥
विरह कमण्डल कर लिये, बैरागी दो नैन।
मांगें दास मधूकरी, छके रहें दिन रैन॥

दास वियोगी विकल तन, ताहि न चीन्हें कोय
तम्बोली का पान ज्यों, दिन दिन पीला होय ॥

दिल की लगन बुरी होती है। जब कोई वस्तु दिल को लग जाती है तो वह दिल लगी होकर दिल की लगन बन जाती है। लगन होना मुख्य है। जब लगन में लगा, लगावट से सम्बन्ध जोड़ा तो यह लगन ही सच्चाई बनकर उसके दिल से चिपट जाती है। फिर न कहीं लगन है न दिल लगी है न लगावट है। यह अभ्यास की बातें हैं। जो करते हैं जानते हैं जो नहीं जानते वह इसको क्या समझेंगे! जब लगन लग जाती है तो मनुष्य को और कुछ नहीं सूझता। वह अपने आप में मस्त रहता है।

लागी लागी क्या करे? लागी नाहीं एक।
लागी सोई जानिये, जो करे कलेजे छेक॥
लागी लागी क्या करे? लागी सोई सराह।
लागी का यह है पता, उठे कराह कराह॥
लागी लागी क्यों कहे? लागी का घर दूर।
लगन लगी लागी भया, तब दर्शन भरपूर॥
लगी नहीं मन में कभी, झूठ कहे संसार।
लगन लगी तब जानिये, फिर नहीं सार असार॥
लागी जिसके मन बसी, लगन से लागा काम!
जीते जी निर्वाण पद, सतगुरु का सत् नाम॥

नरसिंह रात को सोया। गायत्री का स्वप्न देखता रहा। वह स्वप्न में मिली उसने चाहा कि झपटकर उसे गले से लगाले। गायत्री ने कहा—"चल पापी! परे हट! मेरा तेरा मिलाप कैसा! तू नरसिंह भान है मैं गायत्री हूँ। मुझ में तुझ में बड़ा अन्तर है तू कुछ है और मै कुछ हूँ।' डरकर पीछे हट

गया। नरसिंह भान का परिचय तो कुछ दे दिया गया गायत्री अभी तक परदे में है। स्त्री परदे में रहती है जैसे शरीर में प्राण। शरीर तो दिखाई देता है परन्तु प्राण को कोई नहीं देखता। यदि किसी ने आज तक प्राण को देखा है तो हमें बतादे। वह देखने की वस्तु ही नहीं है। उसे कोई क्या देखेगा! और कैसे देखेगा। उसके देखने की आंखें और होती हैं। वह अनुभव सिद्ध वस्तु है दृष्टि सिद्ध नहीं है। अनुभव बढ़ाने की आवश्यकता है। इसके लिये पत्थर का कलेजा चाहिये। उतावलेपन से काम नहीं चलता।

सब्र करो। धीरे धीरे हम तुमको गायत्री का पता देंगे जो इस समय योगी के रूप में मुसद्दरों की गुरु बनी हुई है। क्या किया जाय! आँखें बनते बनते बनती हैं और जब वह बन जाती हैं तब देख भाल सकती हैं।

घट में है सूझत नहीं, लानत ऐसे जिन्द।
नानक इस संसार को हुआ मोतिया बिन्द॥
घट में है सूझत नहीं, भटका बाहर जाय।
घट का घट में मिलेगा, कहैं कबीर समझाय॥
घट के भीतर आरसी, मुख देखा नहीं जाय।
घट में दर्शन तब मिले जब मन की दुब्धा जाय॥

नरसिंहभान ने कहा—"गायत्री क्या तू मुझको भूलगई?"

'गायत्री—"यह प्रश्न अपने मन से कर।'

नरसिंहभान—'मैं तो तेरी खोज में मारा मारा फिर रहा हूं। कैसे कहूँ कि तुझे भूल गया!"

गायत्री—'तू किस से और किसकी सहायता लेकर मेरी खोज करता है। मैं शान्ति हूँ तेरा मन अशान्त और चंचल है। अशान्त मन को शान्ति से क्या सम्बन्ध है?"

नरसिंहभान—"तू सच कहती है। मेरी यही दशा है।"

गायत्री—'यदि तेरे मन में शान्ति होती तो शान्ति की मूर्ति दिखलाई देती। जब अशान्ति है तो उसी का दृश्य चारों ओर दिखाई देगा।"

नरसिंहभान—"क्या तुझ में शान्ति है?"

गायत्री—"मैं साक्षात् शान्ति की रूप हूं।"

नरसिंहभान—"मैं ने आज तुझ को दिन के समय भेड़िये की पीठ पर सवार देखा, बन्दरों ने तुझे खाने को दिया। तू भी तो मारी मारी फिर रही है। कैसे कहूँ कि तुझ में शान्ति है।"

गायत्री—"मैं ने सूअर बन्दर और भेड़ियों को बश में कर लिया है। वह मेरे सहायक हैं। तू उन से डरता है इस लिये वह तेरे भयानक शत्रु हैं।"

नरसिंहभान—"मैं ने यह बात नहीं समझी।"

गायत्री—"जो कुछ है वह समझ ही का तो फेर है! नहीं समझा तो अब समझ ले। सूअर बन्दर और भेड़िये यह मानसिक भाव हैं। यह मेरे बश में आगये इस लिये मुझे शान्ति प्राप्त है। तुझे इन पर अधिकार नहीं मिला इस लिये यह तेरे लिये दुखदाई हैं। अब बात समझ में आई या नहीं?"

नरसिंहभान—'यह दूर की बात है। तू लम्बे डग भरती है। बाहर मुखी और अन्तर्मुखी में भेद है। तू अन्तर्मुखी है। मैं बाहर मुखी हूँ।"

गायत्री—"तभी तो मैं कहती हूँ। कि मुझ में और तुझ में बड़ा अन्तर है!"

नरसिंहभान—"परन्तु दोनों के मिलाप के लिये बिचली कड़ी का होना सम्भव है ।'

गायत्री—"तुझमें समझ बूझ है। इसमें सन्देह नहीं।

नरसिंहभान—'फिर मिलाप की भी सम्भावना है ।'

गायत्री—"जहाँ सम्भव और असम्भव दोनों की सम्भावना है वहाँ हर बात की सम्भावना हो सकती है ।'

नरसिंहभान—'एक पग तू मेरी ओर बढ़ा, दो पग मैं आगे बढ़ूँगा। फिर मिलाप ही मिलाप है। मैं तो तेरी खोज में रहता हूँ। बड़ी कठिनाई से पता लगाया और तू भागी भागी फिरती है ।'

गायत्री—ऐसा तो होना ही चाहिये। जो जिस वस्तु को चाहता है वह वस्तु उस से भागती रहती है। इस चाह को रोको और दबाओ फिर मिलाप हुआ हुआ है।'

नरसिंहभान—"तू पहेलियाँ बुझवाती है। स्पष्ट शब्द में बात चीत क्यों नहीं करती ?'

गायत्री—'कहती तो हूं कैसे कहूँ! सारी आपत्तियाँ इच्छा और वासना ही के साथ तो हैं। वासना के जाते ही सब कुछ प्राप्त है।

चाह मिटी चिन्ता गई, मनुआ बेपरवाह।
जाको कछू न चाहिये सोई शाहनशाह ॥
चाह मिटी चिन्ता गई, रह अचिन्त के देस।
जिसे नहीं कुछ चाहिये, वह सुने गुरू उपदेस ॥
चाह मिटी चिन्ता गई, पाया नाम रतन।
बिना चाह के मिल गया, पद निर्वान का धन ॥

नरसिंहभान—"यदि मैं चाह न करूँ या मुझ में वासना न हो तो मुझ में तेरी चाह क्यों उत्पन्न होने लगी ? और मैं क्यों मारा मारा फिरूँ ?"

गायत्री—'यही तो बात है जो तेरी समझ में नहीं आती। चाह को मेट दे अचाह होजा। बावले ! किस बात की चाह करता है। चाह गहिरा और अँधेरा कुँआ है जिसमें सारे चाहने वाले गिरे पड़े रहते हैं। मन में ठान लो कि मुझे किसी बात की इच्छा नहीं है। जहाँ यह विचार दृढ़ हुआ तेरी दशा भी मेरी जैसी हो जायगी और जब तू मेरी तरह हो गया तो समझ ले कि मैं तुझको मिल गई !'

नरसिंहभान—'बात ठीक है समझ में आती है। अभ्यास करने की आवश्यकता है।'

गायत्री—'फिर अभ्यास में लग जा और अब जब मन में कोई चाह उत्पन्न हो उसकी जड़ उखेड़ता रहे। फिर मुझे सब कुछ प्राप्त हो जायगा। तू तो पढ़ा लिखा है। मैं पढ़ी लिखी नहीं हूं।'

नरसिंहभान—'अभी मुझ में कमी है।'

गायत्री—'माया छाया एक सी, बिरला जाने कोय।
भक्ता के पाछे लगे, सन्मुख भागे सोय॥

नरसिंहभान—'सच है।'

आसा तजी निरास हो, बाधक नहीं शरीर।
पीछे पीछे हरि फिरें, कहत कबीर कबीर॥

नरसिंहभान—'यही बात तो नहीं होती।'

गायत्री—'फिर कुछ दिन के लिये सब्र कर। उतावला सो बावला, बावला सो बगचीची।'

नरसिंहभान—'तू नंगी क्यों रहती है ?'

गायत्री-मुझे कपड़े की इच्छा नहीं और जब इच्छा ही नहीं रही तो आवश्यकता पूरी होगई। मनुष्य नंगा आता है और नंगा जाता है। मेरा जीवन प्राकृतिक है, बनावटी नहीं है।'

नरसिंहभान– 'मुसहरों से क्यों सम्बन्ध जोड़ा?'

गायत्री–'जब मनुष्यों में दया का अभाव देखा जंगली पशुओं का साथ किया, जंगलियों से मेल की सूझी क्योंकि इन में दया और प्रेम का अभाव नहीं है। सभ्य मनुष्य प्रकृति से बहुत दूर है और जंगली मनुष्य, पशु पक्षी उस के बहुत ही निकट हैं।'

नरसिंहभान–'मनुष्यों ने तेरे साथ क्या बुरा व्यवहार किया?'

गायत्री–'मुझे देखकर आप समझ लो। यदि यह अच्छे होते तो मुझे कुत्ते ने नहीं काटा था जो उन से अलग रहती। सब को देख भाल लिया। अब अलग होकर शान्त हूं न कोई दुख न सुख है, मैं इन दोनों से बहुत ऊँचे चढ़ गई।'

नरसिंहभान– तू झूठ नहीं कहती। लोग तुझे अभागी कहा करते थे! सुबह कोई तेरा मुँह तक देखना नहीं चाहता था। सब तेरे मरने के लिये मनाया करते थे। तू सच कहती है। फिर भी एक मनुष्य ऐसा था जो तेरे साथ सच्ची सहानुभूति रखता था। उसने तेरे साथ बुराई नहीं की। उसका ध्यान तो होना चाहिये था।

गायत्री–'जो मनुष्य किसी से यह पूछे कि वह किसको कितना चाहता और प्यार करता है तो उस से कहना चाहिये कि यह बात दूसरों से पूछने की नहीं है। अपने ही मन से पूछ देख! दूसरे को इसका क्या पता! यह मन ही एक ऐसा यन्त्र है जो इसकी नाप तोल कर सकता है।'

नरसिंहभान—'मैं हटधर्मी नहीं हूँ। तेरी बातों को समझता हूँ। मुझ में कमी है। मैं लोक लाज और मर्यादा से डरता था।'

गायत्री—'फिर मैं तेरी कैसे होकर रहती? और तू कैसे मुझे रख सकता था!'

नरसिंहभान—"अब तो यह बात नहीं रही। अब मन का पात्र शुद्ध और निर्मल हो गया है।'

गायत्री—"यदि बरतन बन गया है और वह स्वच्छ है तो आप ही आप उसमें मोती रख दिया जायगा। वह उसके झलक को देखेगा और देख देख कर प्रसन्न होगा। मैले बरतन में कोई मोती नहीं रखता। यह तू जानता है!'

नरसिंहभान—"सालों होगये। मुझे तेरा प्रेम हुआ और वह दिनों दिन दृढ़ होता गया। अब तू क्या कहती है?"

गायत्री—"तू पूछता क्या है? पहिले मैं तेरा प्रश्न तो सुनूँ तब उत्तर दूँ। जब तक तेरे मुँह से न सुन लूँ तब तक उत्तर कैसे दे सकती हूँ। जो मन में हो उसे कह डाल।'

नरसिंहभान—"मैं यह चाहता हूँ कि तू मेरे पास रहे और मैं तेरे साथ रहूँ। इसके अतिरिक्त मुझे और किसी बात की इच्छा नहीं है।'

गायत्री—"इसका उत्तर मैं तुझे दे चुकी हूं बेपरवाह हो जा और बेपरवाई तुझे मिलेगी। मैं भी बेपरवाई हूं। इच्छा को छोड़ और वासना को मन से दूर कर दे।'

नरसिंहभान—"तेरी इच्छा मन से दूर नहीं होती किन्तु यह पल पल प्रबल ही होती जाती है।"

गायत्री—

"जान बूझ जो संग्रह करहीं।
कहो उमां! सो कस नहीं मरहीं ?॥'

नरसिंहभान—"बहुत कुछ हो चुका। अब इन बातों की आवश्यकता नहीं रही। अब तो मुझे तेरी चाह है और बस!'

गायत्री—"इस इच्छा को छोड़। इसी इच्छा से संसार का सारा माया जाल फैला हुआ है।'

नरसिंहभान—"यह सब मैं ने सुन लिया और समझ लिया।'

गायत्री—"इतने ही से काम नहीं चल सकता। सुन लिया समझ लिया अच्छा किया। अब अनुभव करके उसपर दृढ़ होजा। जब तुझ में दृढ़ता आजायगी तू मुझे अपने से अलग नहीं पायेगा।

नरसिंहभान—"अब तो तू गुरु बनगई है और गुरु भी किन की हुई? मुसहरों की। क्या ब्राह्मण तेरे चेला बनने के योग्य नहीं थे?'

गायत्री—

"अहं अग्नि हिरदय जरे, गुरु से चाहे मान।
तिनको जम नेवता दिया, हो हमरे मेहमान॥
बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे लम्बी खजूर।
पंछी को छाया नहीं, फल लागे बहु दूर॥
जहाँ आपा तहां आपदा, जहाँ संशय तहाँ सोग।
कहैं कबीर यह क्यों मिटें चारों दीरघ रोग॥"

नरसिंहभान—'मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं मिला। क्या ब्राह्मण तेरे चेला होने के योग्य नहीं हैं।"

गायत्री—"मैं ने उत्तर तो दे दिया। यह अहँकार में भरे हुये हैं। इन्हें जाति अभिमान ने बुरी तरह से दबोच रक्खा है। मुसद्दों में यह बात नहीं है। इस लिये वह अच्छे और सच्चे अधिकारी हैं। अधिकार का होना आवश्यक है"

नरसिंहमान—"अच्छा एक बात और बता दे। बाहरी आँखों को तेरा दर्शन कब मिलेगा।"

गायत्री "आज से चौदह दिन के पीछे।"

ग्यारहवाँ अध्याय

शरीर और आत्मा का मिलाप

भाव स्वप्न और कर्म यह तीन विकाश के रूप हैं। भाव स्थूल वस्तु है जो जड़ और बुनियाद है। स्वप्न उसी का ध्यान है। पहिला कारण और दूसरा सूक्ष्म है। जब वह बात हो जाती है तो उसी का नाम कर्म है। यह भाव का स्थूल रूप है। संसार में इन्हीं तीनों का पसारा है। हर फ़ल्सफ़ में इनके नाम चाहे अलग अलग हो परन्तु यह सच्ची और खरी बात है जिसकी ओर लोगों की दृष्टि कम जाती है। भाव का स्थान सुषुप्ति, स्वप्न की जगह स्वप्न अवस्था और कर्म का स्थल जागृत है।

नरसिंहभान के मन में भाव उत्पन्न हुआ। उसने उसी का स्वप्न देखा और अब दोनों मिल कर कर्म का रूप धारण करने को हैं।

भाव पहिला, स्वप्न दूसरा और कर्म तीसरा दर्जा है। जिस समय जीवन पलटता है कर्म करते हुये वह स्वप्न अवस्था की ओर जाता है और फिर भाव में जाकर लय हो जाता है। इन्हीं को त्रिलोकी कहते हैं।

नरसिंहभान ने सोचा कि स्वप्न तो स्वप्न ही है। वह भीमपुर से चला और विरनई के नाले को पार करके ठाकुर सूरज नरायन सिंह के बाग़ में पहुंचा और गायत्री की राह देखने लगा। वह तेरह दिन तक इसी प्रकार चक्कर लगाता रहा परन्तु वह न आई। चौदहवें दिन जब वह बाग़ में महुऐ के वृक्ष के नीचे बैठा हुआ था मूँड़ादेव की ओर से जंगली सुवर पर चढ़ी हुई गायत्री आ रही थी। इसने नरसिंहभान को देख कर पुकारा—'दायें बायें खिसकजा। सुवर तीर की तरह सीधा चलता है ऐसा न हो तुझे अपने खंग से घायल कर दे!' यह खिसक गया। वह गुफा की ओर जा रही थी। उसने समझा पहिले की तरह वह गुफा में जाकर आँखों से ओझल हो जायगी, हाँक लगाई -'गायत्री! मैं तेरे देखने के लिये आया हूँ। आज चौदहवाँ दिन है। तू ने आज के लिये बचन दिया था।'

वह सूवर से उतरी सीटी बजाकर उसे भगा दिया और आप नरसिंहभान के पास चली आई।

'कहो क्या कहते हो?'

'मैं जो कहना चाहता हूँ तुम उसे पहिले ही से जानती हो।'

"यह बात नहीं ! जब वाणी मिली हुई है तो शब्दों द्वारा उसे प्रकट करो !'

मैं चाहती हूँ कि तुम मेरे साथ रहो और मैं तुम्हारे साथ रहूँ।"

"क्या तुम जानते हो मैं कौन हूँ।'

'यदि न जानता होता तो तुमको गायत्री कहकर पुकारता कैसे !'

तुम कौन हो ?'

क्या तुम भूल गईं ! मैं नरसिंह तुम्हारा पड़ोसी हूँ।"

"मेरी पड़ोस में जंगली पशु रहते हैं। तुम मेरे पड़ोसी नहीं हो सकते हो।'

'दो साल हुये मैं तुम्हारा पड़ोसी था। क्या तुम मुझको सचमुच भूल गईं ?'

"वह दशा और थी। यह दशा और है। उस दशा में तुम मेरे पड़ोसी रहे होगे परन्तु अब मैं तुमको अपना पड़ोसी नहीं समझ सकती।'

"यह क्यों ?"

"वह जीवन मृत्यु में बदल गया। यह मेरा नया जन्म है। जन्म जन्मान्तर की बात कौन याद रखता है। मैं इसे अच्छा नहीं समझती। जीवन के सम्बन्ध जीवन तक रहते हैं मरने के पीछे वह सम्बन्ध टूट जाता है।'

"तुम तो जीती जागती हो मरी नहीं हो।"

'मनुष्य क्षण क्षण जन्मता मरता रहता है। मैं ने तो अपनी दशा छोड़ दी। तुम्हारे दो वर्ष होगये। मुझे यह भी याद नहीं कि दो साल हुये या पांच साल। तुम जानते होगे। देखो ! उस समय बिना कपड़े पहने मैं घर से बाहर नहीं

निकल सकती थी। आज एक दम नंगी हूँ और लज्जा नहीं आती यह परिवर्त्तन नहीं तो और क्या है।'

"है और अवश्य है। समयानुसार अवस्था बदलती रहती है और इस परिवर्त्तन के साथ मनुष्य भी क्षण क्षण बदलता रहता है।'

"अच्छा! अब यह सुनाओ कि तुम क्यों मेरे पीछे पड़े हो! मैं आज दो तीन सप्ताह से देख रही हूं कि तुम नित्य मूँड़ादेव का चक्कर लगाते रहते हो इसका कोई न कोई कारण भी होगा।'

कारण के बिना तो कोई कार्य होता ही नहीं। यह तो बनी बनाई बात है। मुझे जो कहना था कह चुका दो साल पहले जो भूत मुझ पर सवार था वह अब तक सर से नहीं उतरा। मैं रात और दिन तुम्हारी याद किया करता हूं। मैं ने अपने मन मन्दिर में तुम्हारी मूर्ति स्थापित कर रक्खी है और पुजारी बनकर पूजता रहता हूं। कभी कभी यह ध्यान इतना घना होजाता है कि मैं मूर्छित हो जाता हूं और लोग समझते कि मुझे मिरगी की बीमारी हो रही है।'

देखा! हम में और तुम में बड़ा अन्तर है। मेरा कहीं ठौर ठिकाना नहीं और तुम्हारे घर बार है। मैं नंगी हूं तुम कपड़े पहिनते हो मैं जंगली पशुओं के साथ रहती हूँ। तुम सभ्य लोगों में उठते बैठते हो। हमारा तुम्हरा मेल होना कैसे सम्भव है!'

"मैं तुम्हारे लिये सब कुछ छोड़ने और त्यागने को तैयार हूं। तन मन धन और मान प्रतिष्ठा सब तुम पर न्योछार है।

मैं तो मुसहरनी हो गई। तुम नहीं जानते। उनके साथ मेरा मेल जोल।"

मैं तुम्हारे लिये मुसहर बन सकता हूँ। जब चाहो परीक्षा ले लो।'

'ब्राह्मण और मुसहर के साथ उठे बैठे या उनके साथ खाये पिये यह असम्भव है। इन्हें तो कोई हाथ तक नहीं लगाता। इनकी छाया से लोग दूर भागते हैं। इनके शरीर से दुर्गन्धि निकलती रहती है। मैं कैसे मानूँ कि तुम इस परीक्षा में पूरे उतरेंगे!'

'कर देखो! हाथ कंगन को आरसी क्या है?'

'इसके अतिरिक्त मैं विधवा हूँ। तुम कुवाँरे हो। क्या तुम मेरे साथ रहना पसंद करोगे?'

'हाँ! मैं तुम्हारे लिये सब कुछ करने को तैयार हूँ।'

'इसका प्रमाण!'

मेरा धैर्य्य! मेरा व्यवहार! मेरा प्रेम! मेरा सच्चा और निष्काम प्यार! इस से अधिक और क्या चाहती हो?'

बहुत अच्छा! मैं तुम्हारी बात मान लेती हूँ। चलो! मेरे स्थान पर चलो।'

नरसिंहभान उठा। आगे आगे गायत्री पीछे पीछे नरसिंहभान। नाला पानी से भरा हुआ था। उसके ऊपर एक छोटे से तंग मुँह का गढ़ा था। साधारण मनुष्य वहाँ जाने से डरता था। गायत्री ने उँगली उठाई 'यह मेरे रहने की जगह है। मैं अन्दर चलती हूँ! तुम भी मेरे पीछे २ चले जाओ।

वह गढ़े में घुसी। नरसिंहभान भी किसी तरह सँभलते हुए उसमें मुँह के बल घुसा। कुछ दूर तक तो मुँह के बल खिसक खिसक कर चलना पड़ा। फिर धीरे धीरे गढ़ा गहरा होता गया। कुछ दूर और जाने पर उसमें इतनी जगह निकल आई कि दो चार मनुष्य सुगमता से खड़े हो सकते थे।

गायत्री ने चकमक से आग निकाली और लकड़ियाँ जलाईं। उस प्रकाश में नरसिंहभान ने देखा कि जगह स्वच्छ और निर्मल है परन्तु सामान एक दम कोई नहीं है। केवल एक तूँबा पानी से भरा हुआ रक्खा था और पाँच सात आम पड़े हुये थे।

गायत्री—'मैं आज दो साल से इसमें रहती हूं। मनुष्यों के अत्याचार से घबराकर मैं ने यहाँ शरण ली है। कैसे आश्चर्य की बात है कि जंगली पशु तो मेरे साथ प्रेम और प्यार रखते हैं और मनुष्य घृणा की दृष्टि से देखते हैं। पता लगता है कि मनुष्यों के अपेक्षा पशुओं में प्रेम का संस्कार अधिक हैं क्या तुम यहाँ आकर प्रसन्न हो?'

नरसिंहभान— मेरी प्रसन्नता तुम्हारे साथ है। जहाँ तुम रहोगी वहाँ मैं सुखी रहूंगा। मेरी दृष्टि में यह जगह स्वर्ग लोक से भी बढ़कर है।'

गायत्री—'कहना सहज और रहना कठिन है। दो ही चार दिनों में तुम्हारा मन उचट जायगा और तुम्हें भागने की सूझेगी।'

नरसिंहभान—'ऐसा कभी नहीं होगा क्योंकि मेरी सच्ची प्रसन्नता का केन्द्र यही है।'

गायत्री—'बहुत अच्छा! दो चार दिन में इसकी भी परीक्षा हो जायगी।'

नरसिंहभान—'कहो तो मैं अभी से यहाँ रहने लगूँ।'

गायत्री—'उतावले मत बनो। उतावले का काम अच्छा नहीं होता। धैर्य्य और शान्ति से काम लो। हाँ! जब जी चाहे यहाँ आजाया करो परन्तु न कोई तुम्हारे साथ आये और न किसी को तुम मेरा पता बताओ। जब तुम्हें अभ्यास

हो जायगा दिन भर हम दोनों इसी में रहेंगे। रात के समय बाहर निकलेंगे और मुसहरों को सत्संग करायेंगे।

नरसिंहभान—'मैं ने ऐसा सुना है कि अब रात के समय मुसहर यहाँ नहीं आते।'

गायत्री—'ठीक है। मैं ने जान बूझ कर इन्हें रोक दिया है क्योंकि ब्राह्मण नहीं चाहते कि मुसहर मूँड़ादेव पर आयें। वह उनके पूजा करने की जगह है। मैं मन बचन या कर्म से हिंसा करना नहीं चाहती। सत्संग तो मैं अब भी कराती हूं। इस गुफा की दूसरी राह पश्चिम की ओर है। उसके सामने भयानक गढ़ा है। आधी रात के समय जब पानी नहीं बरसता मैं बाहर निकलती हूं और मुसहरे आजाते हैं। यह मेरे श्रद्धालू और सच्चे सेवक हैं। तुम को भी उनके साथ रहना सहना और सत्संग कराना पड़ेगा।'

इस प्रकार वह देर तक गप शप करते रहे। फिर गायत्री ने नरसिंहभान से कहा—'अब तुम घर को जाओ। तुम्हें कल परसों आने का अधिकार है जब जी चाहे मैं चाहे रहूँ या न रहूँ तुम गुफा के अन्दर आकर ठहर सकते हो।'

और वह उसे गुफा से बाहर लाई।

बारहवां अध्याय

दुसहगों का गुरु

नरसिंहभान का नित्य ही घर से लापता रहता उसके पड़ोसियों के आश्चर्य का कारण हुआ। वह गांव से निकलता बिरनई के नाले की ओर जाता और दिन में लापता रहता. सन्ध्या समय फिर गाँव में आकर पहुँच जाता। कई दिनों तक यह दशा रही फिर वह रातों को भी लापता रहने लगा। कुछ दिनों पीछे ऐसा हुआ कि वह कई कई दिन और रात घर से ग़ायब! लोग चकित थे कि वह कहां रहता है। यह सब जानते थे कि उसने योगी की खोज लगाने की प्रतिज्ञा की थी परन्तु उसने अपनी सफलता या असफलता की बात किसी से नहीं कही थी। उसके स्वभाव में भी बहुत बड़ा परिवर्त्तन आ गया था। मिलना जुलना कम! खाना पीना कम! बात चीत करना कम! लोग उससे बात चीत करने की प्रबल इच्छा रखते थे परन्तु वह सब से कतराता ही रहा और उसका भेद किसी पर नहीं खुला।

जब तक बरसात के दिन थे उसकी बातों पर परदा पड़ा रहा। बरसात गई जाड़ा आया और नरसिंहभान अब भी सिकुड़ सिकाड़कर रहने लगा जैसे रात की ओस के पड़ने से कमल की पंखड़ियां सिकुड़ जाती हैं। पड़ोसियों की ओर से उसने अपना ध्यान हटा लिया। अब उसे मिरगी का दौरा कभी नहीं हुआ। उसके रूप रंग से निर्भयता बरस रही थी।

जब किसी ने कभी पूछा कि क्या तुम को योगी मिल गया तो वह जान बूझ कर अनसुनी कर जाता था। दो चार दस दिन की बात होती तो कोई हर्ज नहीं था। महीनों होगये। उसने घर का काम काज भी छोड़ दिया। कहाँ रहता था क्या करता था किसी को भी पता नहीं था। अब तो गाँव वाले उसके पीछे पड़ गये और जासूस की तरह उसकी ताक में रहने लगे। जब उसे पता लगा कि लोग छाया की तरह उसके पीछे रहने लगे हैं उसे भी घबराहट हुई।

एक दिन उसने गायत्री से कहा—'अब बहुत दिनों तक हम लोग छुप नहीं सकते। कभी न कभी भाँडा फूटेगा।'

गायत्री—'क्या हुआ! चाँद और सूर्य की जोड़ी कब तक छुपी रह सकती। सूर्य दिन को प्रकाश देता है। चाँद रात में चाँदनी फैलाता है। एक रात के समय छुपा है। दूसरा दिन को छुपा रहता है। क्या अच्छा हो कि दोनों एक साथ आकर देखने वालों की आंखों को चका चौंध कर दे।'

नरसिंहभान—'बात तो अच्छी है।' इस में कोई हर्ज भी नहीं है।'

गायत्री—परन्तु यह हो कैसे।'

नरसिंहभान—'यदि साधारण रीति से यह घटना होती है तब तो कोई बात नहीं हैं। अच्छा होता कि हम इन की सिधाई से लाभ उठाकर इन्हें चकित कर देते।'

गायत्री—'वह कौन सी युक्ति है? क्या तुम ने सोच भी लिया है?'

नरसिंहभान—'मुझे सोचने का अवसर नहीं मिला जब से तुम मिल गई हो मैं तुम्हारे सत्संग में मस्त रहता हूँ। मुल्ला की दौड़ मसजिद तक और मैं तुम्हारे पास पहुँचा।'

गायत्री हँसी—'यह सब ठीक है। यदि अब तक नहीं सोचा है तो अब सोचो। इसी युक्ति से सब को चकित कर दो।'

नरसिंहभान—'यह शक्ति मुझ में नहीं है। तुम शक्ति हो। तुम चाहो तो ऐसा कर सकती हो।'

गायत्री—'परन्तु शक्ति शक्तिवान के सहारे रहती है।'

नरसिंहभान—'यहाँ तो सारी बातें उलटी ही हैं।'

गायत्री—'क्या गंगा कभी उल्टी भी बही है?'

नरसिंहभान—'यहाँ! काशी में पहुँचकर गंगा का बहाव बदल गया है। वहाँ वह उत्तर वाहनी (उत्तर को ओर बहने वाली) होगई। सब कुछ सम्भव हो सकता है।

गायत्री—'अब तो तुम उड़ चले। दूर दूर की सूझने लगी।'

नरसिंहभान—'यह सब तुम्हारी संगत का फल है। तुम मुझे मिलीं, दौलत हाथ आगई। अब मैं वह नहीं हूँ जो पहिले था।'

गायत्री मुसकराई—'सोचो! किस प्रकार हम अपने आप को इन पर प्रकट करें।'

नरसिंहभान—'युक्ति तुम्हें बतानी होगी।'

गायत्री—'सोचो तो सही। जब दो दिल मिलते हैं और मिलकर काम करने लग जाते हैं तो वह यदि चाहें तो संसार को चकित कर सकते हैं। सोने को सुहागे का मेल भड़का देता है। जब तक मैं अकेली थी छुप कर रह सकती थी। अब दो होगये। छुपना असम्भव है। यदि इस प्रकार हम अपने आप

को धीरे २ प्रकट करते हैं तो कोई परिणाम न होगा और यदि अचानक कोई बात हो जायगी तो लोग बहुत दिनों तक कहते सुनते रहेंगे।'

नरसिंहभान—"फिर वह युक्ति क्या है"

गायत्री—"युक्ति यह है कि बहुत से कागज के परचों पर लिखो कि मुसहरों का गुरु प्रकट हुआ है। जिसको शास्त्रार्थ करना हो वह मैदान में आये। ज्ञानी ध्यानी कर्म्मी धर्म्मी ब्राह्मण क्षत्रिय शूद्र हर एक को अवसर है कि वह अपने विचार को प्रकट करें। यदि धर्म की कोई बात किसी की समझ में न आती हो तो मुसहरों के गुरु से आकर पूछे। जहाँ दस बीस गाँव में यह कागज दीवारों पर चिपका दिये गये लोग पढ़ पढ़ कर आश्चर्य करेंगे और मेरे आस-पास भीड़ लग जायगी। हाँ! इतना ध्यान रहे कि कोई यह न भाँपने पाये कि मैं स्त्री हूँ वरन् खेल बिगड़ जायगा क्योंकि यहां के मनुष्य स्त्रियों को पशु बनाकर रखते हैं।'

नरसिंहभान—"युक्ति तो बड़ी अच्छी है। मेला लग जायगा। दूर दूर तक नाम होगा और सम्भव है कि इस से कुछ लाभ भी हो।'

गायत्री—"तुम ऐसा ही करो। एक दो दिन में कागज लिख डालो। मैं मुसहरों को समझा दूँगी वह लोगों की आँख बचाकर रातों रात गोद से कागज ब्राह्मणों के घर चिपका आयेंगे वह भी विचित्र बात होगी क्योंकि मुसहरों से ऐसी आशा नहीं रक्खी जा सकती।'

नरसिंहभान—"लो! मैं आज ही बहुत से कागज लिख डालूँगा।'

गायत्री और नरसिंहभान ने विज्ञापन बनाया। नरसिंह-भान ने इसे हिन्दी में लिख डाला और दो तीन दिन पीछे मुसहर एक ही रात में धनापूर धनीपूर, छतमी कौलापूर बेरी बैसा जगापूर कुलमन पूर बिलन्दपूर और जंगीगंज के देहात के ब्राह्मणों के घरों पर कागज़ चिपका आये। विज्ञापन यह था:--

विज्ञापन

कभी नदी नाव में ! कभी नाव नदी में ! यह संसार क्या है ? नदी नाव का संयोग है। काल चक्र का पहिया बराबर घूमता रहता है। कभी वह ऊपर आता है और कभी नीचे जाता है। यह परिवर्त्तन सदैव होता रहता है। कोई यह न समझे कि जो बुरा है वह बुरा ही बना रहेगा। यहाँ छोटे बड़े होते हैं और बड़े छोटे होते हैं। पानी में गिरा हुआ पानी ही में नहीं पड़ा रहता। न्यायकारी ईश्वर सबके उभरने का अवसर प्रदान करता है। एक दिन घोड़े के भी दिन फिरते हैं। अब तक ब्राह्मणों को अहंकार था कि वही धर्म और कर्म के आचार्य हैं परन्तु वह भ्रष्ट होगये। कन्या बेचने लगे। ६-६ महीने की कन्यायें २०-२० और २५-२५ वर्ष के पुरुषों के साथ ब्याही जाती हैं। अन्धेर की बात यह है कि तीन महीने की कन्या को पत्तल पर लिटा कर युवा पुरुषों के साथ फेरे दिलाये जाते हैं। पाँच पाँच वर्ष

की लड़कियों का गठ बन्धन ४०-४० वर्ष के लोगों के साथ होरहा है। जब तक लड़कियाँ युवा अवस्था को प्राप्त होती हैं पुरुष देव थक थका कर स्वर्ग लोक की राह लेते हैं और वह जीवन पर्यन्त रड़ापा भोगती हैं। सारे भदोही में अत्याचार मचा हुआ है! यह क्यों? क्योंकि ब्राह्मण निरक्षर भट्टाचार्य बन गये और कुरीतियों पर चलने लगे। क्या यह दशा सन्तोष जनक है? देश में घोर अत्याचार और व्यभिचार मचा हुआ है। यदि कुछ दिनों यही दशा रही तो सब कुछ नष्ट भ्रष्ट होजायगा। इसलिये मुसहर जाति के गुरु ने आचार्य पदवी को ग्रहण किया है और देश और जाति के सुधार का बीड़ा उठाया है। मिती कार्तिक वदी १० एकादशी और द्वादशी को किशुनदेवपूर नामक ग्राम में ठाकुर गुलज़ारी लाल के बगीचे में मुसहरों और अन्य जातियों का संगठन होगा। एक ब्राह्मण मुसहर बनाया जायगा। जिसको विद्या बुद्धि का अभिमान हो, भ्रम और संशय हो अथवा दीक्षा लेना चाहे तो इन तीनों दिनों वह वहाँ आकर उपस्थित रहे। मुसहरों के गुरु उनको शिक्षा प्रदान करेंगे और दीक्षा देकर उनका नवीन और नई रीती से संस्कार करेंगे।

(हस्ताक्षर) कोलाहल मुसहर

खिलबिली मच गई। सब के कान खड़े हुये। ब्राह्मणों में चर्चा होने लगी कि अब घोर कलियुग आगया, जो न होजाय वही थोड़ा है।

पूरा कानूनगोयान में कायस्थों का पुराना घराना आबाद है जो पढ़े लिखे और बेपर को उड़ाने वाले हैं। जब यह सुना हँस कर कहने लगे:—

"बुत करें आरजू खुदाई की।
शान है तेरी किबरियाई की।"

धनापूर में कुछ अँग्रेजी और फारसी पढ़े हुये ब्राह्मण रहते हैं। जब मुसहरों की ओर से यह चेलैंज सुना वह दंग रह गये और कहने लगे —

"खुदा की शान कि जंगल की कलचिड़ी गंजी।
हुजूर बुलबुले बुस्ताँ करे नग्मा संजी॥
अजीब बात है और यह अजीब है मजमून।
अजब नहीं कि हो अब मुल्क में शकररंजी।"

गोपीगंज भदोही महराजगंज ज्ञानपूर इत्यादि इस इलाकों की बड़ी बड़ी बस्तियाँ हैं। यहां विज्ञापन नहीं लगाये गये थे, परन्तु जंगल की आग की तरह यह बात हर जगह फैल गई और सब ने दांतों तले उँगलिया दबाईं। केवल वैश्य और राजपूत ऐसी जातियां थीं जिन्होंने इस पर प्रसन्नता प्रकट की:—

ज़र्रा का भी चमकेगा सितारा।
क़ायम जो जमीन वो आसमाँ है॥

तारीख आगई। सारे इलाके के लोग झुण्ड के झुण्ड इस तमाशा के देखने के लिये आये। इतनी भीड़ लगी कि तिल रखने की जगह नहीं थी। मुसहरों से फ़र्श का प्रबन्ध नहीं हो

सका क्योंकि यह कंगाल और फाके मस्त लोग हैं। तमाशा देखने वाले भी सब देहात के ही थे। इनका भी ध्यान इधर नहीं था। सब के सब जमीन पर आसन मार मार कर बैठ गये। इनके पीछे नवयुवक योगीराज आया। ब्रह्मवर्चस का तेज चमक रहा था। चमकीली और बड़ी बड़ी आंखें! चौड़ा ललाट! शान्ति स्वरूप! आनन्द मूर्ति! हँसते हुये गुलाबी होंठ! गोरा और छरहरा शरीर! अङ्ग अङ्ग सुडौल! मानों वह सौन्दर्य के साँचे में ढले हुये थे। देखते ही सब में आदर सन्मान का भाव उत्पन्न हुआ और सब लोग एक दम उठ खड़े हुये और हाथ बांधकर नमस्कार किया। किसी को भी यह ध्यान नहीं हुआ कि मुसहरों का गुरु यही है।

आज वह पहिले की तरह नंगा नहीं था। दोखची धोती लँगोट की तरह पहिन रक्खी थी। छाती और कन्धों पर आँचल पड़ा हुआ था। हाथ में तूँबे का कमण्डलु था। सर पर जटा जूट बँधी हुई थी। हाथ और पाँव नंगे थे। उसने खड़ाऊँ या जूता नहीं पहिन रक्खा था।

आते ही वह मुसकराया। मुसकराहट में उसके होठ इस तरह खुले जैसे गुलाब की सिमटी हुई पंखड़ियाँ खिल जाती हैं। लोगों ने नमस्कार किया। उसने उसका उत्तर नहीं दिया केवल खुली हुई तिरछी चितवन से चारों ओर आँख डाली। उसकी जिह्वा बन्द थी। उसका काम आँखों ने किया। सब लोग समझ गये कि योगी उनके आने से बहुत प्रसन्न है।

सब लोग चकित थे। सन्नाटा छाया हुआ था। सुई भी गिरती तो उसका शब्द सुनाई देता।

वह चारों ओर देखकर ऊँची जगह पर बैठ गया जो चबूतरे की तरह ऊँची बनाई गई थी। इस पर किसी तरह का आसन नहीं पड़ा था।

तेरहवां अध्याय

योगी का पहिला व्याख्यान, अहिंसा परमो धर्मः

योगी जी के आसन पर विराज मान होते ही नरसिंहभान उठा और सबको धन्यवाद देते हुये इस तरह बोला:—

"प्रिय महाशय और सज्जन वृन्द! यह नो पवित्र मूर्ति आप लोगों के सामने विराजमान हैं हमारे आदर और सन्मान के योग्य हैं। इनकी अवस्था १५-१६ वर्ष से अधिक नहीं है परन्तु आप लोग इस पर न जाइये। जन्म जन्मान्तर की सिधि जब इकट्ठा होजाती है तब वह विशेष प्रकार के रङ्ग और रूप भरने लगती है और उस समय ऐसी पूर्ण व्यक्तियाँ संसार में आती है जिन से सर्व साधारण को बहुत बड़ा लाभ पहुंचता है। यह बड़े सुधारक होते हैं। मैं आप लोगों को धन्यवाद देते हुये प्रार्थना करता हूं कि योगी जी अपने श्री मुख से आप सब लोगों को उपदेश देने की कृपा करें।

नरसिंहभान के बैठते ही योगी जी उठे:—

"संसार में मनुष्य सर्व श्रेष्ठ और सर्वोत्तम है। इस से बड़ा कोई नहीं है यहां तक कि देवता भी मनुष्य शरीर के लिये तरसते हैं और यह उन्हें प्राप्त नहीं होता।"

'मनुष्य पूर्ण है और सब अपूर्ण हैं। मनुष्य में प्रकृति की सारी शक्तियाँ रहती हैं। किसी में यह दबी रहती है और किसी में उभर खड़ी होती है। जिसमें यह उभर जाती हैं वह पूर्ण मनुष्य बन जाता है जिसमें यह दशा नहीं हैं यह अभी अपूर्ण ही बना हुआ है।'

'जो ब्रह्माण्ड में है वही पिंड में है। जो काम ब्रह्माण्ड में होता या हुआ करता है। यही पिंड अर्थात् मनुष्य के शरीर में भी हुआ करता है। दोनों की एक जैसी दशा है।'

मनुष्य यह समझ ले और काम में लग जाय फिर धीरे-धीरे आप सँभलता और सुधरता चला जायगा और एक न एक दिन सच्चे अर्थ में मनुष्य बनकर रहेगा।'

'मनुष्य के कार बार के दो रूप हैं एक बुरा दूसरा भला। जो बुरी राह पकड़ते हैं यह आप भी दुखी होते हैं और दूसरों को भी दुखी करते हैं। जो अच्छी राह पर चलते हैं वह आप सुखी रहते हैं। और दूसरों को भी सुखी रखते हैं और उनका काम सुगमता के साथ हो जाता है।'

'बुराई की राह पहिले पहिल चौड़ी दिखलाई देती है परन्तु ज्यों ज्यों मनुष्य आगे की ओर बढ़ता है त्यों त्यों वह तंग और अँधेरी होती जाती है और चलने वाले का दम घुटता है।'

'नेकी की राह पहिले तंग और सिकुड़ी हुई प्रतीत होती है परन्तु जैसे जैसे मनुष्य आगे की ओर बढ़ता जाता है वैसे वैसे वह चौड़ी और सुख दायक होती जाती है।'

'भलाई सुख है और बुराई दुख है।'

'मनुष्य का काम भला बनना है और भला बनकर दिखा देना है। जो लोग ऐसा नहीं करते वह अपना धर्म नहीं पालते हैं।'

योगी का इतना व्याख्यान सुनकर दो चार ब्राह्मण अपने आप को सँभाल नहीं सके। उनमें राम लोचन और राम सुमेर ने छेड़ छाड़ करदी और बीच में बात काट कर बोल उठे—'यह तो सब ठीक है परन्तु यह क्यों नहीं बताया जाता है कि भलाई है क्या वस्तु !'

नरसिंहभान ने इन से कहा—मित्रो ! धैर्य से काम लो। अशान्त होने से काम नहीं बनता। योगी जी समय समय पर आप हर बात का पता बता देंगे। घबराते क्यों हो ? अभी तो व्याख्यान आरम्भ हुआ है।'

योगी जी ने फिर अपना सिलसिला छेड़ा:—

'भलाई प्रेम है, प्यार है। जिस में प्रेम है वह अच्छा और भला मनुष्य है। जिसमें घृणा है वह बुरा है।'

'यह भलाई ही धर्म कहलाती है और उसका रूप अहिंसा है। अहिंसा परमो धर्म्मः अर्थात् हिंसा न करना ही सब से बड़ा धर्म है।

अहिंसा का तात्पर्य्य यह है कि मनुष्य मन वचन और कर्म से किसी का हृदय न दुखाये। हिंसा मन वचन और कर्म से किसी के मन को दुख पहुंचाना है।'

अहिंसा धर्म और परम धर्म है। हिंसा अधर्म और परम अधर्म है।'

'सब को प्रेम की दृष्टि से देखना अहिंसा है और घृणा या पक्षपात की दृष्टि से देखना हिंसा है। यह इन शब्दों की संक्षेप व्याख्या है।'

रामलोचन से चुप नहीं रहा गया। बोल ही उठा-'तुम्हारे शिष्य मुसद्दर पशुओं को मार कर खा जाते हैं। तुम इसे हिंसा कहोगे या अहिंसा ?'

योगी—"मांस खाना, माँस के लिये पशुओं को मारना हिंसा है। जो ऐसा करते हैं वह बुरा करते हैं।' यदि मुसहर अपने पेट के लिये ऐसा करते हैं तो बुरा है परन्तु इन से भी बुरा उन लोगों का कर्म है जो धर्म के नाम पर पशु वध करते और देवताओं को बलिदान चढ़ाते हैं।'

विन्ध्याचल के मन्दिर में नित्य ही सैकड़ों बकरे काटे जाते हैं। उनके रक्त से मंदिर के सामने का सारा आँगन लाल हो जाता है। यह महा घृणित और दुष्कर्म है। अपढ़ मुसहरों ने अनसमझी से ऐसा कर रक्खा परन्तु पढ़े लिखे लोग जो मन्दिरों में इन पशुओं के गले पर छुरी चलाते हैं वह मुसहरों से भी बुरे अपवित्र और नीच हैं।'

"कोई देवता न रक्त पीता है न माँस खाकर प्रसन्न होता है। मनुष्य स्वार्थ साधन के लिये यह पाप कर्म करता है और व्यर्थ ही धर्म को बदनाम करता है।'

राम लोचन और सुमेर चिल्लाने लगे—'हम पहिले ही से समझे बूझे थे कि यह योगी जी दयानन्दी हैं और हमारे सनातन कर्म का खंडन करने आये है। इनकी बातों का सुनना महा पाप है। बलिदान देना कोई नई बात नहीं है। यज्ञों में पशुबध होता था, मनुस्मृति में बहुत से पशुओं के माँस का पिंडदान करना लिखा हुआ है। फिर हम इनकी बात कैसे मानें?'

योगी—'भाई साहेब! तुम भूल पर हो। मैं न तो दयानन्दी हूँ न दयानन्दजी का नाम ही जानता हूं यदि मांस न खाने से ही कोई दयानन्दी कहलाता है तब तो मुझे दयानन्दी होने से इन्कार नहीं है परन्तु इस शब्द का सच्चा

अर्थ यह है कि जिसे दया करने से आनन्द मिले वह दयानन्दी है।

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये, जब लग घट में प्रान।

रामसुमेर—"बस पता लग गया योगी जी दयानन्दी हैं। इनकी बात कोई हिन्दू न सुने।"

योगी—"भाई! तुम व्यर्थ ही झगड़ा मोल लेते हो। जो तुमने पूछा मैंने अपनी समझ के अनुसार समझा दिया। बुरा क्यों मानते हो। सुनना हो तो सुनो न सुनना हो तो न सुनो। मैं तुम्हारा गला तो नहीं दबाता हूं।"

नरसिंहभान ने कहा—"महाराज! आप अपना उपदेश दीजिये। यहां बहुत से लोग सुनने के लिये तड़प रहे हैं। इनके चिल्लाने से क्या होता है?"

रामलोचन—

"हरिहरि निन्दा सुनहिं जो काना।
होहिं पाप गोघात समाना।"

योगी—"मैं किसी की निन्दा नहीं कर रहा हूँ न यह मेरा कर्म है। सच्ची बात कहने में मुझे भय नहीं है। मैं मनुष्य धर्म समझाने का यत्न कर रहा हूं और वह अहिंसा है।"

ठाकुर सुजानसिंह—"आप कहिये! अब छेड़ छाड़ न होगी।"

योगी—"प्रेम ही मनुष्य का लक्षण है। यही भलाई या नेकी है। द्वेश और घृणा से बचकर रहना चाहिये क्योंकि यह बुराई है।"

"जो भला करेगा उसका अच्छा फल पायेगा। जो बुराई करेगा आप उसका दण्ड भोगेगा।"

"भलाई करो बुराई से बचो। इसी में सब की भलाई है।"

"इसी भलाई का दूसरा नाम प्रेम है खाने से खिलाने में अधिक स्वाद मिलता और पहिनने से पहिनाने में विशेष आनन्द आता है।"

"जो तुम से घृणा करे तुम उससे प्रेम करो। जो तुमसे ईर्षा रक्खे उसके साथ सच्ची महानुभूति प्रकट करो।"

"आपस में मिलजुल कर रहे। मिलाप की राह स्वर्ग को जाती है। अनबन मत करो। अनबन की राह नर्क को ले जाती है।"

"सारे मनुष्यों का जन्म एक ही नियम के अनुसार हुआ है। असलियत की दृष्टि से वह एक हैं। सब को भाई समझो और भाइयों की तरह आपस में व्यवहार रक्खो।"

राम लोचन से न रहा गया फिर चिल्ला उठा — योगीजी अधर्म सिखाते हैं। सब मनुष्य एक से नहीं हैं।"

योगी— क्यों भाई! इसमें क्या अधर्म है?"

रामलोचन—"अधर्म यह है कि तुम शास्त्र और वेद के विरुद्ध उपदेश कर रहे हो वेद कहते हैं ब्राह्मण ब्रह्मा के मुँह से, क्षत्री भुजा से वैश्य जंघा से और शूद्र पांव से उत्पन्न हुये हैं। फिर यह भाई कैसे हुये? इनकी उत्पत्ति के स्थान भिन्न २ हैं। इस लिये सब अलग थलग हैं। इनका मिलना कभी नहीं हो सकता।"

योगी हँसा—"चारों वरण तो ब्रह्मा के चारों अङ्ग से उत्पन्न हुये परन्तु यह पंचम वरण भील कोल गोंड और

मुसहर कहाँ से निकल पड़े और यह सारे कीड़े मकोड़े पशु पक्षी और जीव जन्तु कहाँ से आगये ? सोच समझ कर तब कोई बात मुँह से निकालो। यों ही अनाप सनाप बकवास ठीक नहीं है।"

सब के सब लोग खिलखिला कर हँस पड़े। रामलोचन और सुमेर से कुछ कहते सुनते न बन आया।

योगी ने फिर कहना आरम्भ किया—"सच्ची बात प्रमाण के साथ होती है। झूटी बात के पाँव नहीं होते। मुँह भुजा जंघा और पाँव का अर्थ और ही है क्योंकि यह बातें अलंकार रूप में कही गई हैं। सर्व साधारण को इनकी समझ नहीं है।'

अहिंसा ही सच्चा धर्म है। जिसने इसे अपने जीवन का आधार बना लिया वह सच्चा मनुष्य होगया। जिसने भूल से इसे नहीं समझा और उसे अपने जीवन का अंग सङ्ग नहीं बनाया उसने अपनी हानि कर ली। यह योग का पहिला सिद्धान्त है।'

ठाकुर सुजानसिंह ने पूछा—"भगवन्! मैं क्षत्री और इस इलाके का ज़मीनदार और रईस हूँ। मैं किस प्रकार अहिंसा धर्म का पालन करूँ जिसमें मन बचन और कर्म से दुख न पहुंचे।'

योगी ने समझाया—यह सीधी सादी बात है। इन चार शब्दों को याद रक्खो—मैत्री करुणा, मुदिता और उदासीनता। मैत्री प्रेम है। सबको प्यार की दृष्टि से देखो। करुणा दया है। यदि किसी से कोई अपराध हो जाय तो उसे क्षमा करो। मुदिता आनन्द है। जिसे देखो कि अच्छा काम करता है उससे प्रसन्न रहो। उदासीनता बेपरवाई है। यदि कोई नहीं

मानता और समझाने बुझाने से भी अच्छी राह पर नहीं लगता तो उसकी ओर ध्यान मत दो। वह आप उसका फल पायेगा।'

सुमेर फिर चिल्ला उठा—"इस सूत्र का यह अर्थ नहीं है। इसका आशय यह है कि बराबर वालों से प्रेम छोटों पर दया बड़ों की बड़ाई सुनकर प्रसन्नता और शत्रुओं की शत्रुता की ओर से बेपरवाई हो।'

योगी— 'विद्वानों और पंडितों ने इसका यही अर्थ किया है वह ठीक नहीं है। मैंने योगियों और साधकों का अर्थ तुम्हें सुनाया है। तुम वाद विवाद व्यर्थ ही करते हो। सोचो और विचार करो तब मेरे अर्थ को सच समझोगे।'

वह चुप हो गया। सब लोगों ने योगी की जय मनाई और प्रसन्न चित होकर अपने अपने घर चले गये।

चौदहवाँ अध्याय

योगी का दूसरा व्याख्यान

'मित्रस्य चक्षुसा समीक्षा महे'

योगी की बातें प्रभाव शाली थीं। जँचे तुले शब्द उसके मुँह से निकलते थे। पढ़े लिखे लोग भी उसे सुन कर दंग थे। नरसिंहभान मन ही मन उसकी प्रसंसा का गीत गा रहा था। और लोगों का विचार पहिले यह था कि मुसहरों का गुरु

मुसद्दर होगा या किसी छोटी जाति का मनुष्य होगा, डाट डपट में आजायगा और ऊँची जाति वाले उसे बातों से दबा लेंगे और साथ ही वह इतना पढ़ा लिखा भी न होगा। वाद विवाद और शास्त्रार्थ के समय बगलें झाँकेगा और मैदान में ठहर नहीं सकेगा परन्तु लोगों का विचार सत्य नहीं निकला। वह पढ़ा लिखा अच्छा विद्वान निकला जिसे हर बात का पता था। उसने लोगों की सहानुभूति भी प्राप्त कर ली। अब उसका पाँव उखाड़ना खेल नहीं था।

पहिले दिन का व्याख्यान बड़ा ही मनोहर और शिक्षाप्रद था। दूसरे दिन भी बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी हुई। ब्राह्मण सबसे पहिले आये कि उसे बात चीत का उलझन में फँसा रक्खें परन्तु योगी सयाना था। वह उस समय वहाँ आया जब सब लोग बैठ चुके थे और उसकी राह देखने लग गये थे। उसके आते ही सब लोगों ने खड़े होकर सादर नमस्कार किया। उसने अपनी मुसकराहट से लोगों के नमस्कार का उत्तर दिया।

योगी के साथ नरसिंहभान के अतिरिक्त और कोई भी नहीं था। आज नरसिंहभान को किसी भूमिका की आवश्यकता नहीं थी।

योगी ने कहा—"मित्रस्य चक्षुसा समीक्षा महे अर्थात् सबको मित्र की दृष्टि से देखो और देखने का स्वभाव बनाओ।

शरीर एक है। आँख नाक कान हाथ पाँव उसके अंग हैं। जब तक यह प्रेम के बन्धन से बँधे हुये मिले जुले रहते हैं तब तक स्वास्थ्य ठीक रहता है। जब यह दशा नहीं रहती तब अशान्ति आ जाती है। इसी प्रकार मनुष्य मात्र एक शरीर है और सारे मनुष्य उसके एक एक अंग हैं। यदि यह मेल जोल

और प्रेम के साथ रहते हैं तो वह सुख और शान्ति में हैं और यदि इसके विरुद्ध दशा है तो अशान्ति के अतिरिक्त और क्या परिणाम हो सकता है।'

हिन्दुओं में जाति पाँत और छूत छात के बखेड़े बहुत रहते हैं। कोई किसी को ऊँचा समझता है कोई नीचा समझता है। परिणाम यह होता है कि इन में मेल मिलाप का नाम तक नहीं है और यह संसार में बदनाम और बेआबरू हो रहे हैं। यदि यह आपस में मिले जुले रहें तो इनकी दुर्दशा अभी जाती रहे और सुख और आनन्द के अधिकारी बन जावें।'

देहाती गँवारों का जलसा। वहाँ उस दिन एक कायस्थ लाला राम बख्श भी आये थे। आव देखा न ताव आप झट बोल उठे— ऐसे व्याख्यान तो आज कल बराबर होते रहते हैं। इनके सुनने से कोई आनन्द नहीं मिलता। बात वह हो जो नई निराली और अछूती हो तब कुछ सुनने वालों का भी उसका आनन्द आये।'

इस नादान के बेतुकेपन पर सब हँसने लगे

योगी भी हँस पड़ा और अपने व्याख्यान से बहक कर पूछ उठा—'तुम क्या चाहते हो?'

रामबख्श. 'कोई नई बात सुनाओ जो दिल को लगे।'

योगी—'क्या मेरे कहने और समझाने का ढंग पसन्द नहीं है? या प्रेम के नाम से तुम्हें चिढ़ है?'

रामबख्श—'सच्ची बात तो यह है कि मैं दोनों को पसन्द नहीं करता। एक तो वह बहुत ही सड़ा गला और पुराना विषय है। दूसरे यह सब कहते हैं, करता कोई भी नहीं प्रेम और प्यार का उपदेश हर जगह सुनने में आता है परन्तु यह कोई नहीं बताता कि मनुष्य मनुष्य के साथ कैसे प्रेम

करे। उसकी युक्ति क्या है ? उसे बताइये। उसी में आनन्द मिलेगा। जीवन साधन सम्पन्न बने तब तो बात है। ज़बानी जमाखर्च तो बहुत सुन चुके हैं और सुनने ही कहने में जीवन व्यतीत होता चला जा रहा है।'

लोगों को रामबख़श की छेड़ छाड़ अच्छी नहीं लगी। एक मनुष्य ने कहा—'कहाँ राम राम ! कहाँ टें टें !' दूसरा बोल उठा—'इनका स्वभाव ही ऐसा है। चुपके नहीं रहते जहाँ जाते हैं डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग ही पकाते रहते हैं।' तीसरे ने राय दी—'इन्हें यहाँ से उठा दो नहीं तो यह बार बार रंग में भंग करते रहेंगे।'

योगी ने उनकी बातें सुनी और प्रेम के साथ कहा—'घबराव नहीं ! मैं इनको अभी चुप कर दूँगा। यह गुर में जानता हूं।' और उसने पूछा—'तुम चाहते क्या हो ?'

राम बख़श—'मैं आनन्द चाहता हूँ। कोई ऐसी युक्ति बताइये कि जीवन सुधर जाय। बातें सुनते २ तो बाल उजले हो गये।'

योगी—'क्या तुम गाना जानते हो ? आनन्द गाने में है और गाने ही से जीवन-सुधरता है।'

इस पर सब लोग खिलखिला कर हँस पड़े।

रामबख़श झेंप गये—'क्या तुम मुझ से दिल्लगी करते हो ?'

योगी—'नहीं। कभी नहीं !' ऐसा कभी हो नहीं सकता गाने से आत्मा को आनन्द मिलता है, शान्ति और प्रसन्नता प्राप्त होती है। इससे शारीरिक, मानसिक और आत्मिक सारे रोग जाते रहते हैं।'

रामबख़श—तो मैं भाँड़ और गवैया ठहरा।'

इस पर लोग हँसे और हँसी को देर तक रोक न सके

योगी—"भांड़ों की तो मैं कहता नहीं परन्तु गवैया होना कोई बुरी बात नहीं है। असली गाना लाखों में से एक को भी नहीं आता।'

रामबख़श—'वह कौन सा ऐसा गाना है जिसे कोई नहीं जानता ध्रुव पद, तराना दादरा, ठुमरी, पूर्बी यह तो सब जानते हैं।'

योगी—"असली गाना केवल गायत्री है। इसे कोई नहीं जानता।'

योगी—"यह गुरु मन्त्र भी गाने ही की वस्तु है।'

रामबख़श—"मन्त्र मुझे आता है मैं उसका गाना नहीं जानता।'

योगी—"यही तो तुम में कसर है। जानने में इतना आनन्द नहीं है। आनन्द तो गाने में आता है। तुम गायत्री का अर्थ भी नहीं जानते होंगे!'

रामबख़श—'मैं गायत्री तो जानता हूँ और उसका अर्थ भी भली भाँति समझता हूँ।'

योगी—"फिर सुनाओ। मैं भी सुनूँ कि तुम क्या जानते हो।'

रामबख़श में उतावलापन बहुत था और साथ ही उन में अकड़ भी थी। सँभल न सके, उबल पड़े, बोले:—

"ॐ भूर्भुवः स्व., तत्सवितुर्वरेण्यं।
भर्गो देवस्य धीमहि, धियो योनः प्रचोदयात्॥

यही गायत्री मन्त्र है या कुछ और?'

योगी—"यही गायत्री मन्त्र है और इसका अर्थ?'

रामबख़श—'इसका अर्थ यह है:—

ॐ (परमात्मा)-भूः (प्राणों से प्यारा) -भुवः (दुखों का नाश करने वाला)-स्वः (सुख स्वरूप)-सत् (वह -सवितुः (जगत् पिता)-वरेण्यं (भजने के योग्य)

भर्गो (विज्ञान स्वरुप)-देवस्य (दिव्य गुण वाला)-धीमहि (हम धारण करें)-धियो (बुद्धियों को) योनः (जो हमारी) प्रचोदयात्(प्रेरणा करे)

भावार्थ यह है—हम उस परमात्मा को जो प्राणों से प्यारा दुखों का नाश करने वाला, भजने के योग्य विज्ञान स्वरूप दिव्य गुण वाला है धारण करें जो हमारी बुद्धियों को प्रेरणा करें

यही अर्थ है या और कुछ ?"

योगी—"मंत्र ठीक है। अर्थ अशुद्ध है, भावार्थ कोसों दूर है। तुम्हें किसी पाखंडी ने अशुद्ध अर्थ बतलाकर फुसला दिया है। क्यों तुम संस्कृत भी जानते हो ?'

रामबखस—"क्यों नहीं जानता।'

योगी—"तो बताओ 'गायत्री' शब्द का क्या अर्थ है ?'

रामबखस—'यह यजुर्वेद के ३२—३ का मन्त्र है।'

योगी—"सच है। यह ऋग्वेद के ३-६२-१० का सावित्री मन्त्र भी है। यजुर्वेद में उसी से लिया गया है। मेरा यह प्रश्न नहीं था। मैं तुमसे केवल 'गायत्री, शब्द का अर्थ पूछता हूँ।'

रामबखश—"गायत्री चौबीस टुकड़ोंका छन्द कहलाता है।

योगी—परन्तु यह शब्द का अर्थ तो नहीं है।'

रामबखश—"इसके अतिरिक्त और क्या अर्थ होगा!'

योगी—'तुम नहीं जानते। 'गा' का अर्थ है गाना और 'त्रै' का अर्थ है तीन। तीन तरह के गाने का नाम गायत्री है।

राम लोचन व्याकरण पढ़ा हुआ पंडित था। बोल उठा—"'त्रै' का अर्थ है सुरक्षित रखना, बचाना।'

योगी — ठीक है। यह भी उस शब्द का अर्थ है परन्तु गायत्रा से तीन प्रकार के गाने ही का अर्थ लिया गया है जिसका पता किसी को भी नहीं है।'

रामबख़श चुप ! सारे ब्राह्मण दंग ! बात सच्ची थी। इस से इन्कार किसे हो सकता था !' योगी चुप हो रहा। उसकी व्याख्या सुनकर सब सन्नाटे में आगये। आज तक न किसी ने ऐसा समझा और न किसी ने इस प्रकार समझाया था।'

दस पन्द्रह मिनट बीत गये। न योगी ही बोला न और किसी ने बोलने का साहस किया। यह दशा देख कर योगी ने कहा—'देखो भाइयो ! यह इन के चुप कराने का गुरु था। लोग न जानते हैं न बूझते हैं। यों ही बिना समझे बूझे बका करते हैं गायत्री क्या है ? इसका पता एक को भी नहीं है। यह गाना है और तीन तरह का गाना है। लोगों ने मंत्र को तो रट लिया है परन्तु असलियत कोई भी नहीं जानता और मेरे पास व्यर्थ ही वाद विवाद और शास्त्रार्थ करने आते हैं। इनकी बुद्धि बच्चों जैसी है। मैं इन्हें समझाऊँ भी तो क्या समझाऊँ ! यह समझने नहीं आये हैं उलटे मुझे समझाने आये हैं। यह मेरी बात सुनते तब भी कुछ लाभ होता।' गायत्री मंत्र को तोते की तरह याद कर लिया और पंडित बन गये। इस तोता रटन्त से भी किसी को कुछ लाभ हुआ है या इन ही को होगा। तोते को लाख पढ़ाओ वह पक्षी ही बना रहेगा। यह मन्त्र है। मन्त्र का अर्थ है—युक्ति बिधि, शब्द की व्याख्या सिद्धान्त, सलाह उपाय इत्यादि इत्यादि। इसे याद कर लिया तो क्या हुआ ! यह समझाते हैं, मन्त्र याद कर लेने से संसार को जीत लिया। गायत्री रहस्य की बात है, साधन की वस्तु

है जिसकी शिक्षा गुरु शिष्य की प्रणा
साधन किस प्रकार किया जाता है
आया है वह तीन तर
आनन्द है। इ
है! कुछ

योगी ने रामबख़्श से यह भी कह दिया था कि अनुवाद
अशुद्ध है। यों तो आज कल लोग इसी अर्थ को ठीक मान
रहे हैं। दूसरे दिन का व्याख्यान और सीटी पर पशुओं के
आने की बात ऐसी थी जिसे किसी ने न कानों सुना था न
आँखों देखा था। लोग व्याख्यान सुनने आये थे वह साक्षात्
विज्ञापन के रूप बन गये थे। योगी को शास्त्रार्थ में जीतने का भाव
ब्राह्मणों के दिल से जाता रहा। वह समझ गये कि योग विद्या
के अतिरिक्त योगी संस्कृत भाषा का पूर्ण विद्वान भी है औ
उसके सामने किसी की दाल गलने वाली नहीं है। तीसरे
बाग में बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठा हुई यहाँ तक कि बैठने
जगह नहीं मिलती थी। लोग खचाखच भर गये।
पढ़े लिखे और अपढ़ सब ही आये। लोगों का
ऐसा योगी नित्य नित्य देखने में नहीं आता।
योगी समय पर आया, आसन पर
उसके कुछ बोलने के पहिले ही रामबख़
आपके व्याख्यान ने मेरे दिल में जग
एक दम पलट गया। मैं आपके श्री
व्याख्या सुनना चाहता हूँ।'
योगी—'गायत्री और
तरह का गाना है! यह
में बटा हुआ है—त्रिलो
और महेश के कारण
तीन तीन भागों में
तीन टुकड़े हैं-
ललाट और
बटा हुआ

वृक्ष
पास
ने कहा
मेरे प्रेम
फिर
हुये आगये।
जंगली सूअर अ
इतने ही जंगली
योगी के साथ रहने
योगी ने फिर तीन बा

हिस्से हैं। यहाँ तक कि उँगलियों को भी देखो तो उसके तीन तीन टुकड़े दिखाई देंगे। यहाँ कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो तीन हिस्सों में न बटी हुई हो। यहाँ जो कुछ है सब तीन ही तीन है, गुण भी सत रज और तम तीन हैं। उनकी दृष्टि से केवल तीन ही तत्व भी हैं– आकाश, अग्नि और पृथ्वी। बीच के दो तत्व हवा और पानी विचली कड़ियां हैं। इस ब्रह्माण्ड के भी तीन हिस्से हैं—दिव्य अन्तरिक्ष और पाताल सूक्ष्म दृष्टि से जो शक्तियाँ इन में काम करती हैं वह भी तीन ही हैं हिरण्यगर्भ अन्तर्यामी और विराट। यह ब्रह्म के तीन नाम ही तीन गुणों की दृष्टि से हैं। इसी प्रकार जीव के तीन नाम तीन अवस्थाओं की दृष्टि से हैं– विश्व तेजस, प्राज्ञ। अवस्थायें भी तीन हैं-जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति। हमारे तुम्हारे शरीर भी तीन ही प्रकार के हैं—स्थूल, सूक्ष्म और कारण। इन उदाहरणों से तुम समझ गये होगे कि त्रिलोकी में जो वस्तु है वह केवल तीन ही तीन है अधिक व्याख्या की आवश्यकता नहीं है समझने के लिये इतना ही बहुत है। इस त्रिलोकी के अन्दर जो प्राकृतिक और स्वाभाविक गाना हो रहा है उसका नाम गायत्री है– गा (गाना) त्रै तीन)।'

"यह संसार क्या है? गान विद्या का स्थल है। यहाँ जो कुछ है गाना बजाना ही है। प्रत्येक वस्तु नाचती हुई दिखलाई दे रही है यहाँ तक कि जब बच्चों का जन्म होता है तो उनके रोने का शब्द भी एक तरह का गाना बजाना है। इसी विचार से स्वर भी तीन ही हैं—अ-इ-उ। इसी दृष्टि से हिन्दुओं का धार्मिक गाना गायत्री कहलाता है एक समय था जब लोगों को उसकी समझ थी और वह गायत्री का गाना जानते थे। उस गाने से उनकी मनोकामना

पूरी होती थी अब वह गाना लोप होता जाता है। हाँ! इशारे के लिये मन्त्र रह गया है। लोग मन्त्र का जाप तो करते हैं और उस पर उन्हें अहंकार भी रहता है परन्तु यह पता नहीं कि यह गाना मात्र है। तुम समझ सकते हो कि केवल मन्त्रों के जुमलों के दुहराने से कोई काम नहीं चलता उदाहरण के लिये यों समझो कि यह गाना मात्र है कि मायदा शकर और पानी के मिलाने से हलुवा बनता है। बात तो ठीक है यह तीनों हलुये के अंग हैं परन्तु जो मनुष्य इस मन्त्र या जुमले को दुहराता रहेगा उसको लाभ क्या पहुंचेगा! न वह हलवा बना सकेगा और न उसका स्वाद ही ले सकेगा।'

रामबख्श—"भगवन्! इस में सन्देह नहीं कि गायत्री का शब्दार्थ तीन तरह का गाना ही है। हमको यह बतलाया गया है कि यह चौबीस टुकड़ों का जुमला अर्थात् एक प्रकार का छन्द है। छन्द तो याद है परन्तु न भावार्थ का पता है न गाने का कोई ढंग ही जानता है। जाप होता रहता है। यहां तक कि कोई कोई मनुष्य तो सवा लाख बार गायत्री मंत्र का जाप करते हैं।'

योगी हँसा—"शकर मायदा और पानी के नाम लेने से यदि हलवा बन जाता होगा तो फिर गायत्री के जाप लेने से तुम्हारा भी लाभ होगा।'

रामबख्श—"भला वला तो आज तक हुआ नहीं। हाँ! हम सब लोग लकीर पीट रहे हैं और लकीर के फकीर बने हुये हैं। आज पहिली बार गायत्री शब्द की व्याख्या सुनने में आई है। आप कृपा करके बतलाइये कि वह गाना क्या है?'

योगी - "यह रहस्य है गुप्त विद्या है। मैं सालों तुम से बात चीत करता रहूंगा और फिर भी तुम कोरे के कोरे ही रहोगे इसके जानने के लिये अधिकार और संस्कार की आवश्यकता है।"

रामबख़्श—"फिर भी कुछ कहिये।"

योगी—"गायत्री 'ॐ' है-अ-उ-म। यह भी तीन अक्षरों से बना है। पंडित इसकी बड़ी बड़ी व्याख्या करते हैं। अकाश और पाताल के सिरे मिला देते हैं। सृष्टि स्थिति और प्रलय को इसी के अन्तर्गत समझते हैं इसका नाम प्रणव रख छोड़ा है।'

रामबख़्श—"ॐ गाना किस तरह गाया जाता है?'

योगी—"जैसे गायत्री का गाना गाया जाता है।'

रामबख़्श—"यह तो वही बात हुई। चक्कर ही चक्कर ही रहा।'

योगी—"इसके अतिरिक्त और क्या होता है?'

रामबख़्श—"ॐ की भी कुछ व्याख्या कीजिये।'

योगी—"गायत्री मन्त्र में इसकी व्यख्या आ जाती है। उसकी पहिली कड़ी है-ॐ भूर्भुवः स्वः। ॐ एक शब्द है और भूर भुवः उसकी व्याख्या है। यह तीनों शब्द ॐ की व्याख्या को बतलाते हैं।'

रामबख़्श - "फिर भी वही बात है। मैं समझूँ तो क्या समझूँ।'

योगी—"जो समझ में आये समझ लो और जाकर घरों में बैठकर लकीर को पीटा करो। इससे अधिक मैं और तुमको क्या कहूं! तुमको बराबर दिखाता जा रहा हूं कि हर जगह तीन तीन का दृश्य वर्तमान है। तुम्हारे अन्दर समझने का

अधिकार और संस्कार नहीं है इसलिये शब्दों के हेर फेर में पड़े रहोगे और सच्चाई का पता न पा सकोगे।'

रामबख़श—"यह भूर भुवः स्वः क्या है।'

रामबख़श—'यह त्रिलोकी के तीन मण्डल हैं-भू लोक भुवःलोक और स्वः लोक।'

रामबख़श—' आप तो भूर भुवः और स्वः को लोक बताते हैं। साधारण रीति से 'भूर' का अर्थ प्राणों से प्यारा, भुवः का अर्थ दुख का नाश करने वाला और 'स्वः' का अर्थ है सुख स्वरूप और यह तीनों ही परमात्मा के नाम हैं। पंडितों के अर्थ में और आपके कहने में आकाश पाताल का भेद है।"

योगी—"ॐ श्रुति है, मूल मन्त्र है। श्रुति कहते हैं जो सुनी गई। इसे राग भी कह सकते हैं। इसके अतिरिक्त श्रुति का और कोई अर्थ नहीं है।"

रामबखश—"श्रुति तो वेद मन्त्र को बोलते हैं। क्या आप इस बात से सहमत नहीं हैं?"

योगी—"हूँ भी और नहीं भी हूँ इसलिये कि वेद श्रुति है और नहीं इसलिये कि श्रुति का अर्थ कुछ का कुछ बताया जा रहा है।"

रामबखश—' आप की एक एक बात अनौखी है। अब दूसरा गोरख धन्धा आन खड़ा हुआ। गायत्री, ॐ और श्रुति तीनों ही की व्याख्या होनी चाहिये। मैं किस किस बात को आप से पूछूँ!"

योगी पूछा पेखी और कहा सुनी में जो फँसा वह मारा गया। असलियत उसके हाथ नहीं आई। तुम तो जाप की कहते हो और यहाँ केवल सुनने से सम्बन्ध है। यह जाप का

विषय ही नहीं है। लोग मुँह और जिह्वा की सहायता से जाप करते हैं। संस्कृत भाषा में 'जप' बिना मुँह और जिह्वा की सहायता से स्मरण करने को कहते हैं। जैसा कि श्रुति के शब्द से आप प्रकट है। वह सुनने का विषय है। उसका सम्बन्ध केवल गाने से है। जो वस्तु कि सुनी ही जा सकती है वह श्रुति है और इस लिये वह स्वतः सिद्ध और स्वतः प्रमाण है। उसका खंडन कभी नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त जो मुँह और जिह्वा से उच्चारण करने का विषय है वह प्रतः प्रमाण है उसका खंडन किया जा सकता है।"

रामबख़्श—'मैं तो घबरा गया। कोई बात मेरी समझ में नहीं आई।'

योगी समझ में कैसे आये!

वस्तु कहीं ढूँढे कहीं, केहि विधि आवे हाथ।
कह कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजे साथ॥
भेदी लिया साथ कर, दीना वस्तु लखाय।
कोति जन्म का पन्थ था, पल में पहुँचा जाय॥
घट का परदा खोल कर, सन्मुख ले दीदार।
बाल सनेही साइयाँ, आदि अन्त का यार॥

रामबख़्श—'इस दीदार से आप का क्या आशय है?'

योगी— तत्सवितुर्वरेण्यं अर्थात् वह इच्छा योग्य सावित्री वह इस सावित्री के दर्शन की ओर इशारा है।'

रामबख़्श—'यह गायत्री मन्त्र यजुर्वेद के ३२—३ से लिया गया है।'

योगी— मैं पहिले ही कह चुका हूँ कि यह ऋगवेद के ३ (६२—१०) से लिया गया है। इसका नाम वही सावित्री मन्त्र है।'

रामबख़श—'यह सावित्री क्या वस्तु है ?'

योगी—'यह सावित्री सूर्य्य है। साधारण लोग ब्राह्मण शिव, वसु, उमा और सत्यवान की स्त्री का अर्थ लेते हैं। इस ज्योतिर्मय सूर्य्य का दर्शन दीदार कहलाता है जिसका मिलना तीन तरह के गाने पर निर्भर है।

रामबख़श – क्या यह दीदार ही दीदार है !'

योगी—'भर्गो देवस्य धीमहि--हम उस देवता के तेज पर ध्यान जमावें और उसको प्राप्त करें जो गायत्री मन्त्र का आशय है और जिसकी सम्भावना केवल गायत्री मंत्र के गाने से है। इसके अतिरिक्त और कोई युक्ति नहीं है।'

रामबख़श—इस से क्या लाभ होगा ?'

योगी—'धियो योनः प्रचोदयात--जो हमारी बुद्धि को हरकत दे या प्रेरणा करे। यह इससे लाभ होता है। हमारा जीवन सहज और प्राकृतिक बने। दुख से निवृत और सुख की प्राप्ति हो। लो ! मैं ने बात बात में तुमको गायत्री मन्त्र का सच्चा शब्दार्थ भावार्थ के साथ २ सुना दिया। मेरे यहाँ लगाव लपेट का काम नहीं है। जो बात है जँची तुली हुई है।'

रामबख़श—'यह सब ठीक है। परन्तु आपने अब तक यह नहीं बताया कि यह गाना किस तरह गाया जाता है।'

योगी—'यह गाना श्रुत है। इसका सम्बन्ध सुनने से है, मुख के जाप से नहीं है। खुले शब्दों में तुमको फिर बतलाता हूं कि यह गाना प्राण से गाया और सुना जाता है। इसके अतिरिक्त और कोई युक्ति नहीं है। कहने के लिये तो मैंने सब कुछ कह दिया परन्तु बात जैसी थी वैसी ही रही। प्राण किस प्रकार इस गाने को गाता है यह भेद की बात है और जब तक

जाता।"

सोलहवां अध्याय

योगी का चौथा व्याख्यान

गायत्री मन्त्र के अंग

नई बात ! नई उपज ! नई युक्ति! फिर यह मनोहर मनोरंजक क्यों न हो ! रामबख्श के होश के तोते उड़ गये। समझ गये कि योगी सच कहता है। गायत्री तीन तरह का गाना ही है जिसका पता बड़े बड़े विद्वानों और वेद पाठी ब्राह्मणों को भी नहीं है कहने लगा-'मुझे पूर्ण रूप से विश्वास होगया कि आप इस विषय को बड़ी उत्तमता के साथ समझते हैं। संसार अन्धकार में है। कम से कम आप को देख कर निश्चय होता है कि गायत्री विद्या का रहस्य अब तक गुप्त नहीं हुआ है। आप ने उसे ओम्, प्रणव, श्रुति और उदगीत का नाम दिया है। मैं इसका अधिकारी हूं यदि जीवन के दिन कुछ और हैं तो मैं आप ही से कभी न कभी इसकी युक्ति पूछ ही लूँगा और उसके अनुसार जीवन सुधार का ध्यान रक्खूँगा।"

योगी—'सुनो ! तुम को उपनिषदों की एक गाथा सुनाता हूं:-देवता और राक्षस बराबर लड़ा भिड़ा करते थे। देवता घबरा गये। वह इस धुन में हुये कि राक्षसों को किसी प्रकार

से परास्त किया जाय, सोचते २ इस बात पर पहुँचे कि यदि उदगीत गाया जाय तो देवता जीत जायँगे। आँखों से कहा—"तुम हमारी जीत के लिये उदगीत गाओ।' आँखों में दोष है। अपने लिये अच्छा दूसरों के लिये बुरा देखती हैं। इस लिये उनके उदगीत गाने से कोई लाभ नहीं हुआ। फिर कानों से वही प्रार्थना की। कान अपने लिये अच्छा और दूसरों के लिये बुरा सुना करते हैं। उन्हें भी सफलता प्राप्त नहीं हुई। जिह्वा, मन, बुद्धि और इन्द्रियों इत्यादि की सब की यही दशा रही। इन सब में भी वही दोष है। अपने लिये अच्छा और दूसरों के लिये बुरा सोचते समझते करते सूँघते जानते और बूझते रहते हैं। यह सबके सब हार गये। राक्षसों ने बुरी तरह इनका पीछा किया। तब यह प्राण की ओर झुके। प्राण से उदगीत गाने के लिये कहा। प्राण में अपना पराया नहीं है घरों में चोर चोरी करने आये आँख मुँह और मन इत्यादि उधम मचा देंगे प्राण सोते हुये भी चलते रहते हैं। उन में भेद भाव नहीं है। जब उदगीत गाने लगे राक्षस आप ही आप हार मान गये और देवताओं की जीत हुई।

रामबख्श—"यह गाथा बड़ी शिक्षाप्रद है। इन्द्रियों और मन आदि से उदगीत गाने का अर्थ क्या है?'

योगी सुनो:—

ॐ वाक् वाक् ॐ प्राणः प्राणः ॐ चक्षु चक्षुः
जबान प्राणः आँख
ॐ श्रोत्रम् श्रोत्रम् ॐ नाभि. नाभिः ॐ हृदयम हृदयम
कान नाभिः हृदय
ॐ कण्ठः कण्ठः ॐ शिरः शिरः ॐ बाहुभ्याम यशोबलम
कण्ठ शिर भुजा

ॐ कर्तल कर पृष्ठये।'
हथेली हाथ की पीठ

यह सब के सब साधन के इशारे हैं—दृष्टि साधन, कान साधन, जिह्वा साधन इत्यादि। उद्गीत गाने में इन सब को पुष्टि मिलती है और इन्हें साधा जाता है। आत्मिक वृद्धि के लिये केवल एक प्राण से यदि काम लिया जाय तो सब को लाभ भी पहुंचता है और साथ ही भेद वाद को मेंटकर मनुष्य मुक्ति का अधिकारी हो जाता है। यदि यह न हो तो फिर जिह्वा के सुमिरन, आँख के दर्शन, हाथ के छूने, मन के विचारने आदि से आत्म ज्ञान का तत्व हाथ नहीं आता। प्राण का साधन सब से बढ़कर है परन्तु यह रहस्य है जो न पुस्तकों में है और न जिसे पब्लिक में कहने सुनने का रिवाज है क्योंकि इस से कोई लाभ नहीं होता। यह गुप्त विद्या है जिसकी शिक्षा केवल गुरु शिष्य की प्रणाली में दी जाती है। इसका रहस्य दीक्षा के समय चेले को बताया जाता है। अधिकार और संस्कार का होना आवश्यक है क्योंकि यहाँ लकीर नहीं पिटवाई जाती। इस से होता क्या है? कुछ भी नहीं। यह संकेत ही संकेत है।'

रामबख़श—'इस दृष्टि साधन से आप का क्या आशय है?

योगी—यह आँखों का साधन है जिससे देखने की शक्ति को एकाग्र किया जाता है। इसी प्रकार जिह्वा का भी साधन होता है जिसमें उसके एकाग्र करने के वचन प्रभावशाली हों। तुम ने देखा—'मैं ने सीटी बजाई। पशु आप ही आप दूर से भागते हुये चले आये। मैं ने आँखों से देखा। वह ठहरे रहे। मैं ने अपनी मानसिक शक्ति को अहिंसा पर जमा रक्खा।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

वह सीधे सादे देवता जैसे बने रहे, वह सारी शक्तियाँ गायत्री के गाने से आप ही आप अभ्यासी में उभर आती हैं। न बहुत परिश्रम करना पड़ता है न एक एक अङ्ग के सुधारने में लगना पड़ता है। केवल एक प्राण के उद्गीत गाने से सब कुछ प्राप्त हो जाता है। उद्गीत का अर्थ है 'उधर का गाना' 'श्रुति', 'आकाश' 'वाणी' इत्यादि ……।'

रामबख़श—'वाह महाराज ! तुम तो इस युग में कल्याण रूप शिव के अवतार हो। प्राण से इसे कैसे गाया जाता है ?'

योगी— युक्ति तो मैं बताने का नहीं। हाँ ! इशारा कर दूँगा। उसे सुनोः—

ॐ भू ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः
ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम्

यह गाना है जो शब्द बद्ध किया गया है। इसका भी समझना सर्व साधारण के लिये महा कठिन है। नादान और अनाड़ी तो इन शब्दों का अर्थ ईश्वर का नाम बतलाते हैं जो एक दम असत्य है। यह सात स्थान हैं। उनके गाने (उद्गीत) और इन के सुनने (श्रुति) से इनकी प्राप्ति होती है। कोई अधिकारी मिले तो उसे यह भेद समझाया जाय। यों ही क्या कहा जाय !'

रामबख़श– इनकी व्याख्या आप कैसे करेंगे ?'

योगी—''सुनो और ध्यान से सुनो।'

स्थूल { भू = (जागृत-शरीर-विश्व-
भुवः = स्वप्न - दिल - तैजस्
स्वः = (सुषुप्ति- आत्मा } जीव अवस्था

सूक्ष्म { महः=ब्रह्मजागृत-ब्रह्माण्डी शरीर, विराट / जनः=ब्रह्म स्वप्न, ब्रह्माण्डी मन, अन्तर्यामी / तपः=ब्रह्मसुषुप्ति, ब्रह्माण्डी आत्मा, हिरण्यगर्भ } ब्रह्म अवस्था

कारण { सत् = सत्यम् } रूप, निज रूप

यह इस मन्त्र की व्याख्या है।'

रामबख़्श—'भगवन्! आप की तरह संसार में समझाता कौन है!'

योगी—'जब तक समझने वाला हाथ न आ जाय तबतक समझाने वाला किसे समझाये। कैसे समझाये। और क्या समझाये!'

सैन बैन को जो लखे तासों कहिये धाय।
सैन बैन बूझे नहीं तासों कहे बलाय॥

यहाँ तो सब को भेड़ बकरियों की तरह एक लाठी से हाँका जा रहा है। किसी ने कह दिया यह सात ईश्वर के नाम हैं और अनाड़ियों को यह समझ नहीं आई कि एक की जगह सात शब्दों के प्रयोग की क्या आवश्यकता थी! फिर हर एक के साथ ॐ का शब्द क्यों लगाया गया! क्या वह ईश्वर का नाम नहीं था। यह ॐ उद्गीत है, प्रणव है, गायत्री है तीन प्रकार का (स्थूल सूक्ष्म और कारण दृष्टि से) आत्मिक गाना है। यह सात स्वरों में और तीन परदों (ग्राम) में गाया जाता है।'

रामबख़श—'इतने ही से मैं समझ गया कि आप इस गायत्री के रहस्य को पूर्ण रूप से जानते हैं। मुझे आप अपना शिष्य कीजिये। मैं पहिले गुरु कर चुका हूँ। उनके लिये आदर सन्मान का भाव तो मेरे मन में है परन्तु उनकी शिक्षा से मुझे आत्मिक लाभ कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ। अब मै आप की शरणागत होना चाहता हूँ।'

योगी—'तुम अधिकारी हो, समझ बूझ भी अच्छी है। मुझे तुम्हारे चेला बनाने में इन्कार नहीं है परन्तु यह ध्यान रहे कि मैं मुसहरों का गुरु हूँ। यदि तुम मुसहरों के गुरु के चेला बनना चाहते हो तो मैं तैयार हूँ!'

रामबख़श—आप तो मुसहर नहीं हैं?'

योगी—'मैं भी मुसहर हूँ।'

रामबख़श—'तब भी मुझे कोई रुकावट नहीं है।'

जात न पूछो साध की पूछ लीजिये ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान॥
सीस काटकर दीजिये, तब लीजे गुरु ज्ञान।
बहुतक भोंदूँ बह गये, राख जीव अभिमान॥
यह तन विष की बेल है, गुरु अमृत की खान!
सीस दिये जो गुरु मिलै, तब भी सस्ता ज्ञान।
कोटिन चन्दा ऊगयें, सूरज कोट हज़ार।
सतगुरु मिलिया बाहरा, देखे घोर अँधार॥
जा खोजत ब्रह्मा नाके, सुर नर मुनि देवा।
कहैं कबीर सुन साधवा! कर सतगुरु सेवा॥

योगी—'शाबाश! तुम निर्पक्ष होकर बातें कर रहे हो।'

रामबख़श और योगी की बात बीच में आ पड़ी थी। रामबख़श ने गायत्री की व्याख्या पूछी और उसने उसे समझा

दिया। इस से बहुतों की आँखें खुल गईं। लाला रामबख्श चुप होगये। राम लोचन और सुमेर को अब बोलने या दम मारने का साहस नहीं होता था।

योगी ने फिर सिलसिला छेड़ दिया—'तुम मुसहरों से घृणा करते हो। यह अच्छा नहीं है इन मुसहरों को क्या समझे बैठे हो? यह शिव और पार्वती की सन्तान और गणेश जी के मानसिक पुत्र हैं। संसार में गणेश जी पहिले मुसहर हैं। मुसहर कहते हैं मूष या चूहे के पकड़ने वाले को मूषः= चूहा और हरः=पकड़ना पकड़ रखना) यह 'हर' भी शिव भगवान का नाम है। जो मनुष्य किसी हैसियत में गणेश जी को पूजता है और 'श्री गणेशायनमः' कहता है उसे चाहिये कि मुसहरों को नीची दृष्टि से कभी न देखे। जो चूहे को पकड़ रखता है वह हाथी की तरह बलवान्, पराक्रमी और तेजस्वी होता है। तुम नित्य नित्य कहते हो—

एक दन्त दयावन्त चार भुजा धारी।
मस्तक सेंदूर सोहे मूष की सवारी॥

मैं मुसहर हूँ और इस लिये यदि चाहूँ तो भयानक से भयानक पशुओं पर सवारी कर सकता हूँ। उसका एक उदाहरण तुम ने देख लिया। मुसहर स्वाभाविक स्वतंत्र अभय और निडर होते हैं। यही गणेश जी का गुण है। तुम नहीं जानते होगे कि मूष के अलंकार रूप में कहने का क्या तात्पर्य है। मनुष्य का मन चूहे के सदृश है। जब तक वह हाथी जैसा बलवान न होगा तब तक इस चूहे को कभी अपने वश में नहीं रख सकता। गणेश की सवारी में चूहा है। शिव की सवारी बैल है। विष्णु की सवारी में गरुड़ रहता है। ब्रह्मा की सवारी हँस है। सरस्वती की सवारी मोर है। इस मोर पर

स्वामी कार्तिक भी सवार होते हैं जो मुसहरों के चचा कहलाने की हैसियत रखते हैं। गंगा की सवारी घड़ियाल, लक्ष्मी की कँवल का फूल और पार्वती की सवारी शेर है। यह तुमने सुन रक्खा होगा। यदि तुमको इन बातों पर शास्त्रार्थ करना हो तो मैदान में आओ। 'वाद विवाद में मत फँसो और मैं तुमको शास्त्रों का प्रमाण दे देकर इन मुसहरों की महिमा समझा दूँगा। कोई बात प्रमाण रहित नहीं होगी।'

यह कह कर योगी चुप होगया। सब लोग चुप चाप थे। जब किसी ने कुछ नहीं कहा तब योगी बोला:—

मुसहर गणपति पुत्र हैं, पार्वती सन्तान।
इनकी पूजा बन्दना कोई जो करे सुजान॥
मुसहर सब की आदि हैं मुसहर सब के अन्त।
मुसहर को समझे हो क्या! मुसहर हैं कुलवन्त॥

तुम मुझ से शास्त्रार्थ न करोगे यह मैं समझ गया। तुम मुझे दयानन्दी कह रहे थे और हिन्दू धर्मका खंडन करने वाला मान रहे थे। अब अच्छी तरह तुम्हारी समझ में आगया कि मैं तुम्हारा शत्रु नहीं हूँ और न किसी का खंडन करता हूं। सच्ची सच्ची बात कहता हूँ। यदि मुझ से पूछो तो मैं तुम को बता दूँ कि जिन्हें तुम नीची जाति के समझते हो वह वास्तव में ऊँची जाति वाले हैं। मल्लाह मछलियाँ पकड़ने वाले विष्णु के मच्छ अवतार की सन्तान हैं। पासी सूवर चराने वाले वराह भगवान की औलाद हैं। कछुआ के पूजने वाले केवट सरस्वती पुत्र हैं। कच्छप 'वीणा' का नाम है जो सरस्वतीजी के हाथ में रहता है। इसलिये ऐसी ऊँची जाति वालों को नीचा कहना तुम्हारी भूल है। यह छूत छात जाति पाँत का झगड़ा व्यर्थ और निरर्थक है। मालिक के दरबार में भक्ति देखी जाती

है। वहाँ जाति पांति का आडम्बर नहीं है। ईश्वर की कोई जाति नहीं है। वह सब का है। इस लिये मिलो जुलो, मिल जुलकर रहो, सब को अपना भाई बन्धु समझो, हिन्दू जाति का संगठन करो जिसमें तुम्हारे अन्दर बल पौरुष और शक्ति आये। यह तुम ने क्या उधम मचा रक्खा है! मैं ने तीन दिन के व्याख्यान में बहुत कुछ समझाने बुझाने का यत्न किया। अब उसका सिलसिला बन्द होता है। कल के दिन से काम किया जायगा। कथनी और है करनी और रहनी कोई और ही वस्तु है। एक ब्राह्मण और एक कायस्थ कल मुसहर बनाये जायेंगे और उनको योग की वह विधि बताई जायगी जिस से यह मूष रूपी मन वश में आयगा। कायस्थ तो यह राम-बख़श ही हैं जो अब तक मुझ से प्रश्नोत्तर करते रहे हैं। ब्राह्मण का नाम में नहीं बताता। यदि तुम कल के दिन यहाँ आओगे तो इस अपूर्व दृश्य अपनी को आँखों आप देख सकोगे।

सत्रहवां अध्याय

मुसहर जाति में ब्राह्मणों की शुद्धि

काल भगवान का चक्र विचित्र है! यहाँ जो न होजाय वह थोड़ा है। मुसहर और ब्राह्मणों की शुद्धि करें। इससे अधिक आश्चर्य जनक और क्या बात हो सकती है! ब्राह्मण को अहंकार है कि वह संसार में सबसे ऊँची जाति के हैं। इन

से ऊँचा और श्रेष्ठ और कोई भी नहीं है। आज मुसहरों का एक गुरु आया है जो इन्हें अशुद्ध समझ कर शुद्ध और पवित्र बनाना चाहता है और वह किस तरह ? मुसहर बनाकर !

तीन दिन के व्याख्यान से ब्राह्मणों का पहिला भाव जाता रहा था। वह योगी का लोहा मान गये। उस दिन तो कोई नहीं परन्तु रात के समय घर जाकर उन्होंने पंचाइत की और यह निर्णय किया कि ऐसी अनुचित बात कभी न होने पाये क्योंकि इस में ब्राह्मणों का बड़ा अपमान है। इसलिये बहुत से लोग लठबन्द उस जगह पहुँचे। और लोग भी इकट्ठे थे। भीड़ लगी हुई थी। यह दुनियाँ तमाशे की जगह है। यहाँ सभी अपना अपना तमाशा दिखाते हैं और साथ ही दूसरों का तमाशा देखते हैं। तमाशा देखने की किसे इच्छा नहीं होती ! मनुष्य आप अपना तमाशा नहीं देखता किन्तु अपना बुरा भला तमाशा दूसरों को दिखाया करता है और आप दूसरों का तमाशा देखने की इच्छा रखता है। यदि उसकी दृष्टि अपनी ओर चली जाती और अपना तमाशा आप देखने लगता तो धीरे धीरे सच्चा मनुष्य बन जाता। ऐसा नहीं होता। यही कमी है। फ़िलास्फर कहते हैं—सुधार करने वाला ! अपना सुधार करो। विद्वानों का कथन है-अपने आपको देखो। ज्ञानियों का उपदेश है—अपने आप को पिछानो। यही सच्चा ज्ञान है।

योगी समय पर नरसिंहभान के साथ आया। चारों ओर दृष्टि डाली। बहुतों के तीवर बदले हुये थे। वह भाँप गया। बहुत से लोगों ने उसे हाथ बांधकर नमस्कार किया। उसने बैठते ही लोगों से ऊँचे स्वर में कहा—"आज मैं एक ब्राह्मण की शुद्धि करना चाहता हूं। मैं जानता हूँ कि इस भीड़ में बहुत

से ऐसे लोग भी हैं जो इस विचार के विरुद्ध हैं। मेरा मार्ग प्रेम और प्यार का है। मैं किसी से छेड़ छाड़ नहीं करता। लोग बिना सोचे समझे विरोध करने पर कमर बाँध लेते हैं। काम करने वाले को किसने रोका है! और कौन रोक सकता है! काम करने वाले में बड़ी शक्ति होती है। वह अकेला लाखों का सामना कर सकता है। विरोध करने वालों में बल नहीं होता। वह आप दबे और कुचले रहते हैं। काम करने वाला लगातार चौबीस घंटे अपनी जान लड़ाकर काम में लगा रहता है। विरोधी पन्द्रह मिनट भी जोर के साथ विरोध नहीं कर सकते तुम आप समझ सकते हो कि पल्ला किसका भारी रहेगा इसलिये अपना काम आरम्भ करने से पहिले मैं तुम्हें समय देता हूँ कि जिसे जो कहना हो वह अपने दिल का बुखार निकाल ले।'

राम लोचन—तुम ब्राह्मणों को शुद्ध समझते हो या गुसहर को!'

योगी—'इसे तो तुम आप सोच सकते हो।

रामलोचन—'ऐसा कभी नहीं हुआ।'

योगी—'तुम भूल पर हो। इसी देश में एक बार महाराजा जयचन्द ने सवा लाख ब्राह्मण बचाये थे। यह सब के सब ऐसी जातियों से लिये गये थे जिनको तुम लोग बहुत समझते थे। यह ब्राह्मण बन गये और यह सारा इलाका इन्हीं सवा लाखी ब्राह्मणों से भरा पड़ा है। क्या यह असत्य है!'

रामसुमेर—'सब है परन्तु ब्राह्मण तो मुसहर नहीं बनाये गये थे किन्तु नीची जाति वाले ब्राह्मण बनाये गये थे।'

योगी—'अभी और सुनो—जिस समय सकारी धर्म की वृद्धि हुई क्षत्री कोई नहीं रहा। ऋषियों ने अर्बुद गिर पहाड़

पर जाकर चार अग्निकुल क्षत्री उत्पन्न किये। क्या यह झूट है ?"

रामसुमेर—"ठीक है। परन्तु यहाँ भी किसी ने ऊँची जाति वालों को नीची जाति वाला नहीं बनाया था।"

योगी—"पंजाब में गुरु गोबिन्द सिंह साहेब ने ऐसा ही संस्कार करके नये क्षत्री बनाये जिन्हें खालसा बोलते हैं। जानते हो या नहीं ?"

रामलोचन—"यहाँ भी वही बड़ा बनाने का भाव था। आप तो उलटी गंगा बहा रहे हैं।"

योगी—"सुधार का काम समय और आवश्यकता के अनुसार होता है। प्रकृति आप अपनी कमी को पूरी करती रहती है। काल चक्र सदैव चलता रहता है। उसका पहिया कभी ऊपर है कभी नीचे। इस समय देश में काम करने की आवश्यकता है। पुरुषार्थी और पराक्रमी मनुष्य उत्पन्न करना इस समय का काम है। पढ़ो लिखो आँखें खोलो तब पता लगे। इसलिये यदि लोग मुसद्दर बन जायें तो किसी की क्या हानि है ! और कोई क्यों बुरा माने !'

रामलोचन—'यहाँ के लोग इस बात के लिये तैयार नहीं हैं। रक्त की नदी बह जायगी और मैदान लाशों से पट जायगी ! इस लिये ऐसा करना उचित नहीं।'

योगी—'काम करने वालों को सामना करना ही पड़ता है। जो मर्द हों वह मेरे सामने आजावें। यदि उन में शक्ति है तो मुझे रोक रक्खें।'

रामलोचन—'तुम अकेले हो। एक चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।'

योगी – "राम लक्ष्मण अकेले थे। सोने की लंका को राख कर डाला।'

रामलोचन—"तुम राम लक्ष्मण तो नहीं हो। वह तो ब्रह्म के अवतार थे।'

योगी—"यदि वह ब्रह्म के अवतार थे तो मैं भी ब्रह्म का अवतार हूं और तुम में से हर एक ब्रह्म का अवतार है। एको ब्रह्म द्वितियो नास्ति।

रामलोचन— 'देखा जायगा'

योगी ने तीन बार सीटी बजाई। भेड़िये सूवर और बन्दर दौड़ते हुये आये और सारी भीड़ को घेर लिया परन्तु चुपचाप खड़े रहे।

योगी ने कहा—"देखो! रामचन्द्र के साथ बन्दर रीछ और राक्षस थे। मेरे साथ भेड़िये सुवर बन्दर हैं। इन में से सूवर मूड़ है। बन्दर चंचल है और भेड़िया अज्ञानी हैं। यह तीनों शक्तियाँ मेरे साथ हैं। बोलो! तुम में साहस है इनसे सामना करने का! यदि साहस हो तो मुझ पर आक्रमण करके देखो। आप ही पता लग जायगा कि मैं काम करने के योग्य हूँ या नहीं।'

सन्नाटा छा गया। सब पत्थर की मूर्ति की तरह खड़े रहे और किसी के मुँह से एक शब्द भी नहीं निकला।

योगी पन्द्रह मिनट तक चुपचाप था कि कोई बोले परन्तु बोलता कौन भेड़िये और सूवर को देखकर लोगों का जान सूख रही थी। तब उसने गोगा से कहा –"तुम जाओ पानी लाओ।' वह गया, पानी लाया। योगी ने नरसिंह भान के ललाट पर पानी से तिलक लगाया, और कहा–"आज से तुम मुसद्दर और गणेश पुत्र बनाये गये।' फिर वही सलूक रामबख्श

के साथ किया गया। फिर योगी की आज्ञा पाकर सारे मुसहरों ने फल फूल नारियल और पाँच टके पैसे दोनों के सामने रक्खे योगी ने दोनों को उपदेश दिया-'तुम मुसहर हो गये, संस्कार कर दिया गया। संस्कार के साक्षी सूर्य वायु पृथ्वी मनुष्य और पशु सब ही हैं। अब मैं किसी दिन तुम दोनों को गायत्री मन्त्र का गुप्त रहस्य बताऊँगा जो सनातन से आजतक गुप्त ही चला आया है। दीक्षा देते समय चेले से शपथ कराई जाती है कि वह कभी इस रहस्य को किसी पर प्रकट न करें। कुछ दिनों मेरे साथ रहकर साधन करो। थोड़े दिनों में तुम्हें अनुभव होने लगेगा, साक्षात्कार होंगे शब्द और प्रकाश प्रकट होंगे। जब चित में समता आने लगे और सातों स्थान तै हो जाय उस समय तुम दोनों जगह जगह घूमकर मुसहरों को गायत्री मन्त्र का उपदेश देने लगे। तुम दोनों गुरु बनाये जारहे हो। तुम्हारा जीवन साधन सम्पन्न है। वाचक ज्ञानी न बनो। बातें कम करो काम बहुत करो। सब के साथ प्रेम रक्खो। घृणा से बचकर रहो, प्रेम में बल है। जो इस की कमाई करता है वह हजार गुना लाभ उठाता है। जो घृणा का अभ्यास करता है उसे हजार गुनी हानि उठानी पड़ेगी। प्रेम करने वाले लोगों के दिलों में अपनी जगह बना लेते हैं। घृणा करने वाले से उसके लड़के वाले तक दूर भागते हैं और वह तंग दिल होकर मौत के मुँह में चला जाता है। अपनी आँखों से देखलो-हिन्दुओं की क्या दशा है! यह अपनी छूत छात और जाति पाँति के हाथों आप मारे जारहे हैं। ऐ नये मुसहरो! तुम अपनी मरी हुई और गिरी हुई जाति को फिर जीवन प्रदान करो और उन्हें उठाओ। इसीलिये आज तुम्हारा संस्कार किया गया। तुम एक एक हो। अनेक अनेक होजाओ।

तुम को सरकार के साथ विरोध करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह भयानक है। राजा के प्रेम को दिल में जगह दो और सच्ची प्रजा का धर्म पालन करो थोड़े दिनों में देखोगे कि यह गायत्री मंत्र का साधन तुमको कितना बलवान बनाता है। तुम देवता हो क्योंकि गणेश के पुत्र शिव पार्वती के पोते पर पोते हो, याद रक्खो! तुम्हें राक्षसों के साथ लड़ाई लड़ना है, घृणा छूत छात और जाति पाँति का सामना करना है। देवताओं की तरह गायत्री के उद्गीत को प्राण से गा चलो और तुम्हारी जीत होगी इसमें नाम मात्र भी सन्देह नहीं है, तुम्हारे सपुर्द बहुत बड़ा काम किया जारहा है। केवल इतना ही गुरु का उपदेश है।'

संस्कार में कोई ऐसी बात नहीं की गई जो बुरी होती। इसलिए किसी को आक्षेप करने का अवसर नहीं मिला। योगी ने फिर सीटी बजाई। भेड़िये सूवर और बन्दर जो अब तक चुप चाप खड़े हुये थे कूद फाँद करते हुये लौट गये। ब्राह्मणों को निश्चय होगया कि यह खान पान का प्रश्न नहीं है साधारण संस्कार है और इस लिये विरोध करने की आवश्यकता नहीं है।

रामलोचन और सुमेर ने कहा—'भगवन हम भूल पर थे। हमारे अपराध को क्षमा कीजिये।'

योगी हँसा–"एक बार नहीं सौ बार और हजार बार!'

रामलोचन—"क्या अच्छा होता कि आपही गुरु बने रहते।

योगी–'यहाँ गुरु बनने की इच्छा नहीं है न गुरुआई का ध्यान है। मेरी हैसियत आचार्य पदवी से ऊँची है। मेरी दीक्षा से संसार में बहुत से गुरु प्रकट हो जायँगे।'

रामलोचन—'क्यों आप सबसे योग्य पुरुष हैं।'

योगी—"योगी तो हूँ परन्तु पुरुष तो नहीं हूं।'

रामलोचन—"क्यों ?'

योगी—"मैं स्त्री हूं,'

उसी समय बाग के मुसहरों ने कई पटाखे और बमगोले छोड़े जिससे सब के सब कनकना उठे। इतनी ही देर में योगी ने जनाने कपड़े पहिन लिये। सभी ने देखा कि यह सचमुच स्त्री है एक मनुष्य के मुँह से निकल आया कि यह तो गायत्री पद्मकान्त की लड़की जान पड़ती है .....।

सबको आश्चर्य में छोड़कर योगी ने बिरनई के नाले की राह ली। लोगों ने देखा कि वह लापता है। पूरा कानूनगोवान के एक कायस्थ साहब के मुँह से यह शेर निकला--

"न बर्फ में यह अदा और न शम्श में यह चमक।
कोई बतादे कि यह शोख़ तुन्द ख़ू क्या है ?"

रामबख़्श ने सबको सम्बोधन करके कहा—मित्रो! आप लोग भाग्यवान हैं कि अपनी आँखों से एक ऐसे महान आत्मा का दर्शन कर लिया जो अपने ढंग का अद्वितीय है। अब व्याख्यान न दिये जायँगे। अब केवल काम करने का समय है। योगीराज पुरुष नहीं है स्त्री हैं। आप लोगों में से बहुत से सज्जनों ने उन्हें पहिचान भी लिया। वह ब्रह्मचारिणी रहना नहीं चाहती हैं इन्हें पति के साथ रहने की इच्छा है और यह केवल इसलिये कि लोग उदाहरण देख लें, बुरे रस्मों को दूर कर दिया जाय और सब को सुधार की सूझने लगे। आज के पांचवें दिन उनका विवाह एक मुसहर के साथ होगा। मैं आप लोगों से प्रार्थना करता हूं कि यदि कोई कष्ट न हो तो उस अवसर पर अवश्य आइये। आशा है आप लोग हमारी प्रार्थना को

अस्वीकार न करेंगे। अब आप प्रसन्नता के साथ अपने अपने घरों को जा सकते हैं।"

अठारहवां अध्याय

प्रशंसा पत्र और उसका उत्तर

जो बात हुई विचित्र हुई। इसे चाहे सिद्धि शक्ति का नाम दो या भक्ति का चमत्कार समझो परन्तु इस से कौन इन्कार कर सकता है कि यह विचित्र नहीं है। योगी क्या था? एक मनुष्य था—पढ़ा, लिखा, योग का अभ्यास करने वाला, मनुष्यों और पशुओं तक के दिल पर अधिकार जमाने वाला! और साथ ही इतनी छोटी अवस्था! इतने ही दिनों में उसे इतना अनुभव कैसे होगया! गायत्री मन्त्र की व्याख्यान में उसने बड़े बड़े पंडितों के कान काटे। उसे महामन्त्र बताकर जाप करने वालों को नादान और मूर्ख ठहराया। फिर पुरुष से स्त्री बन गया और मुसहर के साथ विवाह करने की सूझी।

आस पास के ब्राह्मणों में उत्साह की लहर दौड़ गई। उनको इस बात का अहंकार था कि गायत्री मन्त्र का जानने वाला फिर भी ब्राह्मण ही है। साथ ही वह लज्जित भी थे कि वह मुसहर के साथ विवाह करने की इच्छा रखती है। इससे बढ़कर लज्जा की और क्या बात हो सकती थी!

विवाह में अभी पाँच दिन की देरी थी उसने सोचा कि समझा बुझा कर यह सम्बन्ध रोक दिया जाय परन्तु कठिनाई

यह थी कि ढूँढ़ने पर भी किसी को उसका पता नहीं लग सका नरसिंहभान ने उसे खोज निकालने का बीड़ा उठाया था। इस में उसे सफलता भी हुई परन्तु उसने अपने बचन का पालन नहीं किया। उन्होंने उसे अपनी आँखों से देख लिया। यह कम नहीं था। यदि कहीं नरसिंहभान मिलजाता तो उससे बहुत काम निकल सकता था। वह इस समय कहाँ होगा, इसका किसी को पता तक नहीं था। वह तो एक स्त्री का चेला हो गया परन्तु उसे रोक कौन सकता था! रामबख़श की भी यही दशा हुई थी। संसार में हर एक बात की सम्भावना है। एक स्त्री गुरु बन बैठी और पुरुषों को चेला बनाने लगी। आज तक ऐसा कभी नहीं हुआ था। स्त्री को आचार्य होने का अधिकार शास्त्रों ने कभी नहीं दिया और उनका विचार ठीक है। स्त्री का क्या विश्वास। इस मोम की नाक को जिधर चाहो सुगमता के साथ घुमादो परन्तु यहाँ एक ऐसी स्त्री प्रकट होगई जो न केवल आचार्य बन बैठी किन्तु पुरुषों को दीक्षा देकर चेला बना लिया सचमुच कलियुग आगया स्वतन्त्र स्त्री घर बार धर्मकर्म सब नष्ट कर देती है सैकड़ों वर्ष से ब्राह्मणों ने स्त्रियों को अपढ़ और मूर्ख बना रक्खा था। महाराज भोज के समय से उनके पढ़ने पढ़ाने का अधिकार छीन लिया था अंग्रेजी राज में जो न होजाय वह थोड़ा है। अब कुशल नहीं है।

यह विचार थे जो इन ब्राह्मणों को सताने लगे। इनका बस चलता तो योगी को मार ही डालते परंतु इसकी सम्भावना कब थी! वह तो हजारों और लाखों ब्राह्मणों से श्रेष्ठ है।

इन लोगों ने कई दिन तक इस बात पर विचार किया। पँचायतें छुप छुप कर होती रहीं परंतु उनका कोई परिणाम नहीं हुआ कोई बात समझ में नहीं आई।

अन्त में यह सम्मति हुई कि विवाह से पहिले सब लोग मिल जुलकर उसकी सेवा में प्रशंसा पत्र भेंट करें। उसको सच्ची और झूटी प्रशंसा के पुल बाँध दें क्योंकि स्त्रियां प्रशंसा से कुप्पे जैसी फूल जाती हैं। यही उनके मारने का हथियार है। क्या आश्चर्य कि जादू उसपर चल जाय और वह कहने में आजाय।

प्रशंसा पत्र तोप समझा गया जिससे यह स्त्री तोप दम हो जायगी। सब ने यही बात ठहराई। फिर क्या था! एक प्रशंसा पत्र लिखा गया।

चार दिन ज्यों त्यों बीत गये। पाँचवें दिन यह सब से बाग में पहुँचे और योगिनी के आने की राह देखने लगे। अभी और लोग नहीं आये थे। मुसहर मंडप सजाने और बन्दनवार लगाने के काम में लगे हुये थे। जगह जगह केलों के खम्भे खड़े किये गये थे। बीच में चबूतरा बना दिया गया था। योगी नरसिंहभान और रामबखस वहां नहीं थे। यह सब इन्हीं तीनों की राहें देखते रहे।

यह तीनों आज शीघ्र ही आ पहुंचे। योगिनी सादी धोती पहिने हुई थी। उसके दायें बायें नरसिंह भान और रामबखश थे। ब्राह्मणों ने झुककर नरसिंहभान के कान में प्रशंसा पत्र देने की बात कही। उसने अपनी सम्मति प्रकट की।

इतने में भीड़ लग गई। दम के दम में लोग इकट्ठा होगये। ब्राह्मणों ने अपना प्रशंसा पत्र सबसे पहिले पढ़कर सुनाया। जिसका आशय यह था।

"भामिनी!

तू स्त्रियों में श्रेष्ठ है। सूर्य्य और चाँद की आँखों ने भी तेरे जैसी बुद्धिमान और योग्य स्त्री नहीं देखी! मनुष्यों की तो

बातही क्या है ! तू मंत्र यंत्र और तंत्र सबकी जानने वाली है। तेरी योग्यता का कोई पुरुष पंडित संसार में नहीं। इसका हमें पूर्ण विश्वास होगया है।

तुझ में सिद्ध शक्ति है। तू पार्वती का रूप है। कौन जाने कहीं तू उसका अवतार ही न हो। हमारी जिह्वा तेरी प्रशंसा नहीं कर सकती। यदि सरस्वती भी तुझे देख लेती तो गूँगी बन जाती।

तू साक्षात् महा देवी है। आज कोई ऐसा नहीं है जो तेरी बराबरी का दम मार सके। तू साक्षात् शक्ति और सिद्धि है। हम जिस शक्ति और सिद्धि की महिमा का वर्णन पुस्तकों में पढ़ा करते थे वह आज तेरे रूप में देख लिया। तुझे नमस्कार है

हम भूल पर थे। तुझे पुरुष समझ रक्खा था। इसलिये चाहते थे कि तू आचार्य गुरु बनी रहे परन्तु तू शास्त्र की जानने वाली है, धर्म की मर्यादा को समझती है। तूने नरसिंह भान को आचार्य पद प्रदान किया। इसकी आवश्यकता और मुख्यता की समझ अब हमको आई है।

ऐ देवी ! धर्म कर्म के आचार्य ब्राह्मण ही सदैव से होते चले आये हैं। इस लिये यदि बरसिंहभान को मुसहरों का गुरु बनाया गया तो कोई हर्ज नहीं है। ब्राह्मण जगत का गुरु है और जगत में यह मुसहर भी हैं। इसमें कोई बुराई नहीं है। हम इसको मानते हैं। वह अछूत मुसहरों का गुरु बना रहे। इसमें हम रोक टोक न करेंगे। यह काम अच्छा ही हुआ। इस से ब्राह्मण जाति की बड़ाई और महत्व को कोई धब्बा नहीं लगता। सनातन से ऐसा होता चला आया है। मत का पहला चलाने वाला कोई हो अन्त में ब्राह्मण ही को गुरु की पदवी मिल जाती है।

ऐ श्रेष्ठा ! शटकोप श्रासम्प्रदाय का पहिला जड़ ज़माने वाला वैष्णव हुआ था जो जाति का कंजड़ था और मुसहरों से कहीं बढ़कर अछूत था। उसके पीछे यवनाचार्य (यामुनाचार्य) गद्दी पर बैठा। फिर धीरे धीरे वह गद्दी ब्राह्मणों के घर में आ गई श्री रामानुजाचार्य ब्राह्मण थे उन्होंने शटकोप की गद्दी ली और वैष्णव सम्प्रदाय की वृद्धि और उन्नति की कबीर जाति का मुसलमान जुलाहा था जो अछूतों से कम नहीं था। उसने अपनी गद्दी धर्मदास बनिये को दी परन्तु घुसपैठ करके ब्राह्मण महन्त अधिकता के साथ कबीर पन्थ के मठों में भर गये इसी प्रकार दादू मुसलमान धुनिया था। उसका चेला रज्जब अली मुसलमान ही था। ब्राह्मण अधिकता के साथ उसके चेले बने और अबदादू पन्थ के महन्त अधिकता के साथ ब्राह्मण ही हैं ! यह कोई नई बात नहीं है। नरसिंहभान मुसहरों का गुरू बना रहे इसमें कोई हर्ज नहीं है। तेरा यह काम बहुत ही सुन्दर है। स्त्री कभी धर्म की आचार्य नहीं थी। तू ने अच्छा किया जो उसे इनका गुरू बना दिया।

परन्तु ऐ समझ बूझ वाली पंडिता ! तेरा मुसहर के साथ विवाह करना उचित नहीं है। इससे धर्म को बड़ा धक्का पहुंचेगा। तुझे तो उमा की तरह सती की मर्यादा पर चलना था। यह तू क्या कर रही है ? हम इसी अभिप्राय से आज तेरे पास आये हैं कि इस अधर्म से तुझे रोक रक्खें। तू आप धर्म कर्म की जानने वाली है। सूर्य को दीपक ,कौन दिखा सकता है ! हमारी विनती सुन ! और अपने इस विचार को छोड़ दे। बस इतना ही निवेदन करना है। हमारी लाज, हमारी जाति की लाज और देश की लाज तेरे हाथ है। इससे अधिक और क्या कहें !

हस्ताक्षर ... ...

हस्ताक्षर ... ... इत्यादि

योगिनी ने ध्यान के साथ ब्राह्मणों के प्रशंसा पत्र को सुना उसके उत्तर में वह यों बोली:—

"भाइयो ! मैं तुम्हारे प्रशंसा पत्र के लिये सच्चे हृदय से तुम्हें धन्यवाद देती हूँ। मैं ने बहुत ध्यान से तुम्हारी बातें सुनी। तुमने जो मेरी प्रशंसा की है यह तुम्हारा शुभ भाव है। हाँ! स्त्री जाती की योग्यता और शक्ति को मैं भी मानती हूं। संस्कृत भाषा में गुण बाचक शब्द जितने आते हैं सभी स्त्री लिंग हैं जैसे योग्यता, तीव्रता, श्रेष्ठता मुख्यता, दयालुता, शीतलता, और सुन्दरता इत्यादि। इस से पता लगता है कि ऋषि स्त्रियों को पुरुषों से श्रेष्ठतर समझते थे। सरस्वती विद्यादा (विद्या देने वाली) पार्वती बलदा (बल देने वाली) और लक्ष्मी धनदा (धन देने वाली) है। यही दशा और देवियों की भी है।"

"आप लोगों ने कहा है कि स्त्री आचार्य नहीं हो सकती। मैं इस बात को नहीं मान सकती। सृष्टि में पहिली गुरु स्त्री है। विद्या बुद्धि शिक्षा सबकी देने वाली माँ होती है। यह बच्चे के जीवन को शिक्षा और सुधार के सांचे में ढालती है। जब युवा होने पर विवाह होता है और स्त्री घर में आती है। तो वही उसकी साथी बनकर उसके अंग संग रहती है। स्त्री का साथ न हो तो पुरुष निकम्मे बने रहें और उनका जीवन अपूर्ण रहे।"

हिन्दुओं ने इतिहास की ओर ध्यान नहीं दिया न उन्होंने इसे मुख्यता दी है वरन् आप को कहने या सोचने का अवसर न मिलता कि स्त्री आचार्य पदवी ग्रहण करने के योग्य नहीं है

फिर भी मैं कहने से रुक नहीं सकती कि तुम्हारे वेदान्त मत की पहिली आचार्य स्त्री ही हुई है। उसका नाम लोपमुद्रा था जो अगस्त ऋषि की पत्नी थी। उसने ऋग्वेद के मन्त्रों से भविष्य काल के वेदान्त का बीज निकाल कर अपने पति को दिखला दिया। मैत्री और गार्गी वैदिक समय की स्त्रियाँ हैं जो महा तत्त्ववेता और ज्ञानी हुई हैं। वह आचार्य नहीं थीं तो क्या हुआ। बड़े बड़े ऋषि उनकी बातों को सुन कर दङ्ग रह जाते थे। तुमने सुना होगा कि शास्त्रार्थ में स्वामी शंकराचार्य के दाँत खट्टे करने वाली सरस्वती भारती हुई है जिस ने ६ महीने तक उनको लोहे के चना चववाये और अन्त में बिना हारे हुये जान बूझ कर अपनी हार मान ली। शंकर स्वामी ने उसके नाम से दो आश्रम सरस्वती और भारती स्थापित किये। इससे पता लगता है कि स्त्रियाँ पुरुषों से कम योग्य नहीं होतीं। अब रही यह बात का स्त्री आचार्य्य नहीं हो सकती या कोई स्त्री आचार्य नहीं हुई हैं। एक दम असत्य है। सहजो बाई और दया बाई का नाम आप ने सुना होगा। इन्हें बहुत दिन नहीं हुये हैं जो चरनदास जी की गद्दी पर बैठी थीं। हाँ इतना अवश्य है कि स्त्रियाँ अधिकता के साथ आचार्य नहीं हुई हैं।"

मैं ने कुछ समझ बूझकर आप आचार्य पद के ग्रहण करने से इन्कार कर दिया। इसका परिणाम आगे चल कर आप देखेंगे।'

यह सच है कि ब्राह्मण अधिकता के साथ धर्म कर्म के आचार्य हुये हैं परन्तु वह उनका आजन्म अधिकार नहीं है। सृष्टि का पहिला आचार्य मनु था जो क्षत्री वरण का था फिर वही पदवी ऋषभदेव और जड़भरत ने ग्रहण की जो

उसकी औलाद में थे। राज काज का भार बढ़ गया था इस लिये मनु ने इस काम को ब्राह्मणों के हाथ में दे दिया तब से ब्राह्मण आचार्य होने लगे और इसे उन्होंने अपना अधिकार समझ लिया। जब कोई क्षत्री आचार्य हुआ लड़ाई झगड़े की नौबत आई यहाँ तक कि परशुराम जी के समय में इसी ईर्षा और द्वेष के कारण इक्कीस बार क्षत्री वंश का नाश किया गया। फिर भी विश्वामित्र जी ने आचार्य पदवी छीन ली। आप की बातों से सिद्ध होता है कि नीची जाति के मनुष्य भी धार्मिक गुरू बने हैं और सोचने की बात यह है कि वह ब्राह्मणों तक के गुरू थे। आपने शकटोप कबीर और दादू का नाम लिया है। इस लिये यह कहना कि ब्राह्मण ही गुरू हो सकता है ठीक नहीं हो सकता रैदास चमार तक तो ऐसा गुरू हुआ है। जिसकी सम्प्रदाय ने क्षत्री और ब्राह्मण दोनों ही आ गये थे। मीरा बाई और उसकी माँ झाली रानी का नाम उसके शिष्यों में सर्व श्रेष्ठ है। इसके अतिरिक्त जैन धर्म के सारे आचार्य क्षत्री ही क्षत्री थे। बुद्धमत के गुरू भी अधिकांश में क्षत्री ही हुये हैं। यह भी तो हिन्दू ही हैं। इसके अतिरिक्त संसार में मुसलमान यहुदी ईसाई शन्टो (जापानी) धर्म के मानने वाले कितने धर्म हैं जिनके आचार्य ब्राह्मण कभी नहीं हुये। इस लिये आप की बातों के विरोध में केवल इतना ही कहना बहुत है।'

'आपने मुझे सम्मति दी है कि मैं मुसहर के साथ विवाह न करूँ। आप को पता नहीं है मैं ब्राह्मणी नहीं रही मुसहरनी हो गई। इस लिये मेरे विवाह करने से न आप की कोई बदनामी होती है न अपमान होता है मैं यह काम किसी मुख्य कारण से कर रही हूँ वरन् मुझे इसकी आवश्यकता भी नहीं थी।'

"अन्त में आप के प्रशंसा पत्र के लिये फिर धन्यवाद देती हूं और आशा करती हूँ कि आप मेरे इस शुभ कार्य में सम्मिलित होकर मुझे कृतार्थ करेंगे जिससे यह उदाहरण औरों के लिये भी लाभदायक और उपयोगी हासके।

उन्नीसवां अध्याय

विवाह

प्रशंसा पत्र के भेंट करने और उसके उत्तर देने में देर हुई यह आशा नहीं थी कि ब्राह्मण प्रशंसा पत्र भेंट करने का साहस करेंगे वरन् पहिले से इसका प्रबन्ध कर लिया जाता फिर भी जो कुछ हुआ अच्छा ही हुआ। योगिनी ने ब्राह्मणों को उत्तर देकर अपना आसन एक वृक्ष के नीचे डाल दिया और चुप चाप बैठ रही।

आज की कार्यवाही का प्रबन्ध गोगा मुसहर के हाथ में था जो अपनी जाति का मुखिया और बड़ा बूढ़ा समझा जाता था। उसने आस पास के मुसहरों को नेवता दे रक्खा था। वह भी आ गये। बहुत दिन चढ़ आया। तब उसने छतमी के पंडित अशरफी लाल को बुलवाया। उन्होंने मण्डप के नीचे कलश रक्खे, दिया जलाया और योगिनी को बुला भेजा वह आई और लकड़ी के पटे पर बैठ गई। अब तक किसी को पता नहीं था कि कौन मुसहर इस अनमोल रत्न का मालिक बनेगा। सब लोग दंग थे। न कहीं बरात आई न बाजे बजे

ने कोई दूल्हा दिखाई दिया। उनकी आँखें चारों ओर चक्कर लगा रही थीं कि किसी तरह उस भाग्यवान को देखें परन्तु उसका पता तक नहीं था।

पंडित ने कलस और गणेश की पूजा कराकर गोगा से दूल्हा के बुलवाने के लिये कहा। कोलाहल दौड़ा गया और उसका हाथ पकड़े हुये मंडप के नीचे लाया। अब जाकर लोगों की आँखें खुलीं। वह जाति का मुसहर नहीं निकला किन्तु और ही जाति का मनुष्य था जो नया मुसहर बनाया गया था यह कोई और नहीं था किन्तु हमारे पूर्व परिचय नरसिंहभान जी थे। ब्राह्मण हक्का बक्का हो गये। सम्भव है उन्हें प्रसन्नता भी हुई हो परन्तु इसका पता उनके देखने से नहीं लग सकता था।

पंडित ने पूछा—'नरसिंहभान! तुम ब्राह्मण हो। ब्राह्मण कुल में तुम्हारा जन्म हुआ है। द्विजन्मे तो तुम पहिले ही से थे। क्यों कि गुरू ने गले में जनेऊ डाल कर तुम्हारा संस्कार किया था। अब तुम मुसहरों के प्रभाव में आकर मुसहर हुये और तिजन्मे बने। तुम्हारा तीसरा जन्म भी हो गया। यह लड़की गायत्री जो पदुमाकान्त की बेटी है यह भी तुम्हारी तरह तिजन्मी हो चुकी सबके सामने बतलाओ कि क्या तुम उसको अपनी धर्म पत्नी बनाना स्वीकार करते हो।'

नरसिंहभान ने उत्तर दिया—'मुझे सच्चे हृदय से स्वीकार है। मुझे मुसहर बनने का अहंकार है। मैं इस मुसहरनी के अतिरिक्त और किसी के साथ विवाह करना नहीं चाहता। यह मुसहरनी जो मंडप में बैठी हुई है मेरी दृष्टि में लक्ष्मी पार्वती और सरस्वती से कहीं बढ़ कर है।'

पंडित ने तब गायत्री मुसहरनी से पूछा—"बहिन! क्या तू इस मुसहर के साथ विवाह करना चाहती है?"

गायत्री "हां मुझे पसन्द है।"

पंडित--"तब फिर तुम दोनों आपस में सब के सामने समझौता करके प्रतिज्ञा पालन का प्रण कर लो।"

गायत्री ने नरसिंहभान से कहा—"मैं इस शर्त पर तुम्हारे बाये अङ्ग में आने को तैयार हूँ। कि (१) तुम मुसहरों के धर्म का दृढ़ता के साथ पालन करो (२) जो स्त्रियां मेरी जैसी तुम्हें दिखलाई दें उन्हें खोज खोज कर इस जाति में भरती करो (३) देखना! कभी बुरे शब्द मुँह से मेरे लिये न निकालना (४) मेरी सम्मति के बिना घर का कोई काम काज न किया जाय (५) जबतक मेरी आज्ञा न हो तुम किसी जगह न जाओ (६) पाखंड की ओर ध्यान न दो न पाखंडियों की बातें सुनो (७) मुसहरों में पढ़ने लिखने का रिवाज फैलाओ।"

नरसिंहभान--'मैं प्रण करता हूं कि इन सातों बातों का जीते जी तक पूरा पूरा ध्यान रक्खूँगा।"

तब पंडित ने गायत्री से पूछा—"बहिन! वर ने तेरी सब बातों को स्वीकार कर लिया। यदि तुझे और कुछ कहना नहीं है तो इसकी बाँई ओर आ जा।"

गायत्री उठी और नरसिंहभान की बांई ओर आकर बैठ गई। पंडित ने दोनों का गठबन्धन किया और गोगा ने कन्या का हाथ वर के हाथ में देकर कहा—"तुम दोनों आज से स्त्री पुरुष हो गये। इसके साक्षी यह सारे लोग हैं।"

इस प्रकार गोगा ने कन्या दान की रस्म पूरा किया फिर मुसहरों ने अपनी अपनी यथाशक्ति उनको नकद और कपड़े

भेंट किये। इसके पश्चात् यज्ञ किया गया और जितने लोग आये थे उनको फल फूल मुसहरों के हाथ से बँटवाया गया।

विवाह हो गया और यह सब के लिये नई बात थी। ब्राह्मणों के अतिरिक्त और सब लोग प्रसन्न थे यह वहाँ बैठे मान मेख कह रहे थे परन्तु इनकी बातें किसी को अच्छी नहीं लगती थीं।

ठाकुर सुजान सिंह ने पूछा – 'आप लोगों को इस विवाह के होने से क्यों दुख है ?"

रामलोचन--"आस पास में ऐसा घृणित विवाह आज तक कभी नहीं हुआ। यह विवाह नहीं है "यह विनाश काले विपरीति बुद्धिः" के लक्षण हैं।"

सुजानसिंह —"क्यों ?"

रामलोचन—'कहते सुनते लज्जा आती है। यह हम से न पूछो। उन्हीं से पूछो। हमारे मुह बन्द हैं। अच्छा होना कि जैसे योगी ने इतनी धर्म कर्म की बातें आप से कही हैं। अपना जीवन वृतान्त भी आप लोगों को सुना दें।"

सुजानसिंह—'तुम दूल्हा दुलहिन का हाल जानते होगे तब ही ऐसा कह रहे हो।"

रामलोचन—'जानते हैं तब ही तो हमको बुरा लग रहा है न जानते होते तो तुम्हारी जैसी दशा होती। यह दोनों के दोनों संस्कार भ्रष्ट हैं।'

सुजानसिंह ने चकित होकर गोगा से पूछा—'क्या तुम जानते हो कि गायत्री और नरसिंहभान कौन हैं ?'

गोगा—मैं सब कुछ जानता हूँ। यह हमारे गुरू हैं इस लिये अपने मुँह से कुछ नहीं कह सकता। यह कल आप अपनी राम कहानी सुनावेंगे। आज न समय है और न वह

बात चीत करना चाहते मैं। बनकी कथायें बड़ी विलक्षण हैं।'

सुजान - 'यदि ऐसा है तो तुम सब को कह दो कि कल फिर योगी जी और नरसिंहभान अपना जीवन चरित्र सुनायेंगे जो सुनना चाहते हैं वह आ सकते हैं।"

गोगा ने खड़े होकर सब लोगों को सुनाकर ऊँच स्वर से कहा—"आप लोगों ने आज इस शुभ अवसर पर यहाँ आकर हम सब को कृतार्थ किया। उसके लिये मैं आप सब को धन्यवाद देता हूं। यह बड़े पवित्रात्मा और योग्य मनुष्य हैं। इन्हें साधारण व्यक्ति समझना भूल होगी योगिनी गायत्री ज्ञान ध्यान के समुद्र का रंगदार मोती है और नरसिंहभानजी विद्या बुद्धि के सागर के मूँगे हैं। यह तो आपने देख लिया कि चौदह वर्ष की अवस्था में इतनी योग्यता का प्राप्त करना साधारण बात नहीं है। ऐसी घटनायें देखने और सुनने में कम आती हैं। यदि इनके जीवन चरित्र जानने की इच्छा है तो कल फिर दर्शन दीजिये। दोनों अपनी अपनी रामकहानी आप लोगों को सुनायेंगे। इन बातों के सुनने से आप को बहुत कुछ लाभ भी पहुँचेगा और पता लग जायगा कि इतना बड़ा परिवर्तन क्यों और कैसे होगया।'

सबने आने के लिये वचन दिया। दूल्हा और दुल्हिन अपने जंगली स्थान को चले गये। सारी भीड़ देखते देखते छट गई।

बीसवाँ अध्याय

विचित्र बातें

दूसरे दिन पहिले से कहीं बढ़ कर भीड़ हुई। गायत्री आई और आते ही उसने कहना आरम्भ किया—

'आप लोग मेरी रामकहानी सुनने के लिये आये हैं। सुनिये! मैं पद्मकान्त ब्राह्मण की लड़की हूँ। मेरा बाप बहुत ही समझदार और पढ़ा लिखा पण्डित था। मैं अभी सात महीने की भी नहीं थी कि मेरी माँ मर गई! मेरा पालन पोषण मेरे बाप ने किया। लोगों ने उन्हें फिर विवाह करने के लिए समझाया परन्तु यह निर्धन थे! ब्राह्मणों में ऐसे लोगों का विवाह होना असम्भव होता है। लड़की देखने का बुरा रस्म इस इलाके में इतनी अधिकता से फैला हुआ है! कि हज़ार हज़ार पाँच पाँच सौ रुपये में दो दो वर्ष की लड़कियाँ बिकती हैं। जिसके घर में कई लड़कियाँ होती हैं वह माला माल हो जाता है। सारे भारतवर्ष से यह रस्म चला गया परन्तु यह भदोई का ऐसा ज़िला है कि यहाँ दिन दोपहर खुले खज़ाने भेड़ बकरियों के बच्चों की तरह लड़कियां बिकती हैं और कोई पूछने वाला तक नहीं क़ानून तक को धोखा दिया जाता है। अदालत को पता नहीं चलने पाता। बिकती हैं लड़कियां और फ़रज़ी तौर पर कार्रवाई करते हुये रजिस्टरार के यहाँ और तरह से रजिस्टरी कराई जाती है। आप लोग जानते हैं कि इस इलाके में ६-६ महीने की लड़कियों को पत्तल पर रखकर फेरे फिराये गये हैं। यह कोई छुपी चोरी की बात नहीं है। इससे भी बढ़ कर आश्चर्यजनक यह बात है। कि बच्चों के हमल में आते ही लोग आपस में समझौता कर करा लेते हैं

कि यदि लड़की हुई तो हमारे लड़के से ब्याही जाय और उसके लिये हम इतना रुपया नकद देंगे। लड़कियों के बेचने की यह कुरीति और कहीं नहीं पाई जाती।'

'मेरे बाप के पास रुपया नहीं था। यदि रुपया भी होता तो वह कभी दूसरा विवाह न करते। वह बड़े ही सभ्य पुरुष थे। मेरे बाप का कई ब्राह्मणों में तीन ही वर्ष की अवस्था में मेरे ब्याह के लिये घेर घार किया। वह छोटी अवस्था में विवाह करना पसन्द नहीं करते थे परन्तु क्या करते! यदि किसी लड़की का विवाह थोड़ी अवस्था में नहीं होता तो लोग उसे बदनाम करते हैं। मैं भोली भाली और रूपवती हूँ। मेरे गाहक कई थे। उनके आने जाने से तंग आकर मेरे बाप ने एक अच्छे घर में मेरा विवाह कर दिया। संयोग वश जिस लड़के से मेरा सम्बन्ध हुआ था वह चेचक से बीमार पड़ा और बच नहीं सका। मैं विधवा हो गई। इन ब्राह्मणों के लिये कितनी लज्जा और घृणा की बात है कि यह अपनी कुरीतियों से दो दो और तीन तीन साल की लड़कियों को बेवा बना देते हैं। जिसका जी चाहे इसे विवाह कहे परन्तु यह विवाह नहीं है कितने आश्चर्य की बात है कि लड़की ने पति का मुँह तक नहीं देखा और वह बेवा होगई ऐसा अंधेर मचा हुआ है जो और जगह देखने क्या सुनने में भी नहीं आता मैं आप लोगों से क्या कहूं! पांच वर्ष की कन्या का विवाह पचपन और साठ वर्ष के बूढ़ों के साथ किया जाता है। विवाह के दो चार साल पीछे वह मर्घट की राह लेते हैं और बेचारी लड़की बेवा हो जाती है। इस समय भदोही में ऐसी विधवाओं की संख्या बहुत मिलेगी जिन्होंने कभी पति का मुँह तक नहीं देखा। सुनने वालों के रोंगटे खड़े होंगे कि हर साल ऐसी बेवायें सैकड़ों की संख्या में अपना देश छोड़ कर

और जगहों को चली जाती हैं। यह कोई छुपी चोरी की बात नहीं है। एक एक बच्चा इसे जानता है।'

'मैं बेवा हो गई। बाप ने सुना। अपना सर पीट लिया! मैं तो जानती भी नहीं थी कि वह क्यों रो रहे हैं परन्तु उनके सर पर बला का पहाड़ टूट पड़ा था। मुझे याद है मैं ने भोले पन से पूछा—'पिता जी आप क्यों रो रहे हैं? वह बोले—'तू बेवा हो गई। संसार में अब तेरा ठौर ठिकाना नहीं रहा मैं इन बातों को नहीं समझ सकी मैं तो बाप को तसल्ली देकर उन के गले से चिमट कर प्यार करने लगी। मेरे भोले पन ने इन पर और भी बिजली गिराई।'

"इस प्रकार मैं पाँच वर्ष की हुई और कुछ समझने बूझने लगी। बाप ने चाहा कि मैं अपने पति के घर चली जाऊँ और वहाँ सेवा टहल करके अपना जीवन व्यतीत करूँ। कई बार सन्देश भेजा गया। उत्तर मिला कि लड़की डाइन है। वह हमारे लड़के को खा गई। यहाँ उसका कोई काम नहीं है, ऐसा न हो कि वह औरों पर भी हाथ फेर दे।' सोचिये कि यह बातें किस तरह कलेजे को टुकड़े टुकड़े कर देती हैं। गाँव वालों ने सुना। मैं निर्दोष होती हुई डाइन कहलाने लगी प्रातःकाल कोई मेरा मुँह तक देखना नहीं चाहता था। बच्चे वाली स्त्रियाँ अपने बच्चे को बचाती थीं। पड़ोस वाले भी अपने घर में मुझे नहीं जाने देते थे। कहीं से बरात आ रही है मैं पकड़ कर राह से हटाई और घर में बन्द की जाती थी। जब घर के बाहर निकली लोग कहते थे—डाइन जा रही बच कर रहना। पाँच वर्ष की नादान लड़की और उस पर यह अत्याचार ऐसे दुष्टों की छाती क्यों नहीं फट जाती! सारी बेवाओं के साथ यही सलूक किया जाता है। बताइये! इन बेचारियों का क्या दोष है! इन्होंने क्या किया है। इनका

कहना है कि बेवा चीथड़े लपेटे रहें, उसके शरीर पर अच्छा कपड़ा या गहना न हो। उसे साधारण खाना भी न दिया जाय वह समझदार हो या न हो परन्तु व्रत अवश्य किया करे! अन्धेर हो गया।'

'मैं तो अबोध और अज्ञानी थी। मड़ालियों की बद-सलूकियाँ मेरे बाप के कलेजे में कटारी भोंकती रहती थी। वह एक दिन मुझे गोद में बिठा कर बहुत रोये। कहने लगे— 'गायत्री! ब्रह्मा ने तुझे ब्राह्मण की जाति में क्यों जन्म दिया। तू मुसहरनी होती तब भी अच्छा होता! अच्छा! जो हुआ वह हुआ! वह होने को था हो लिया। अब तू एक काम कर जिसमें तेरा जीवन दुख दायी न हो।' मैंने पूछा-क्या करूँ। बोले— मैं पंडित हूं तू मुझसे संस्कृत विद्या पढ़ ले। मैं उसी दिन से लिखने पढ़ने में जी लगाने लगी।'

'बाप ने मुझे अष्टाध्यायी, मनोरमा महाभाष्य रघुवंश रामायण, महाभारत शकुन्तला, हरिवंश श्री मद्भागवत और गीता एक एक करके पढ़ा दिया। मैंने कई पुराण भी पढ़े, स्मृत देखी, वेद के अंगों का भी अवलोकन किया। मेरी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। जिस काम को लोग बीसों वर्ष में भी नहीं कर सकते मैंने उसे वर्षों में कर लिये। गायत्री के विषय को मैं बहुत पसन्द करती थी। जब मैं उन से उसकी असलियत पर प्रश्न करती वह दंग रह जाते थे उन्होंने सन्ध्या की सारी विधि याद करादी। आचमन मन्त्र इन्द्रियस्पर्श मंत्र प्राणा-याम मंत्र परिक्रम मंत्र, चार उपस्थान मंत्र गायत्री मंत्र नमस्कारमंत्र सब के सब कंठाग्र करा दिये परंतु इससे मुझे संतोष नहीं हुआ। मैं जब पूछती कि इस तोता रटन से क्या लाभ है तो वह मुस्कराकर कहते— प्रकृति माता तुझे कर्म काण्ड के बंधन में नहीं फँसाना चाहती, तू ब्रह्म विद्या की

अधिकारी है। यह ब्रह्म विद्या ब्राह्मणों के घर में कभी नहीं थी। यह केवल राजपूत और क्षत्रियों की जायदाद है। ब्राह्मणों ने इन्हीं से सीख कर अपने कर्म काण्ड में मिला लिया है। मुझे इस बात के समझने में बड़ी कठिनाई हुई। मुझे पूरा पूरा विश्वास हो गया कि जो कुछ विद्या है वह केवल ब्राह्मणों ही के घर में है। मेरे साथ बहुत वाद विवाद नहीं किया। पूरा कानूनगोयान में एक ठाकुर सीता राम रहते थे। उन से तेरह मूल उपनिषद मांग लाये और मुझे पढ़ने को दिया। मैं पढ़ गई मुझे निश्चय हो गया कि पूरी विद्या सदैव से क्षत्रियों में चली आई है और जो कुछ किसी ने सीखा इन्हीं से सीखा है। शंकरा चार्य जी ने भी अपने शारीरिक भाष्य में इसको माना है।'

उपनिषदों ने मुझे गायत्री मंत्र के तीन तरह के गाने का भाव दे दिया जिसका इशारा उद्गीत के रूप में वृहदारण्यक और छान्दोग्य उपनिषद में आया है। मैं कई साल तक उपनिषदों पर विचार करती रही। मेरे बाप को भी बहुत कुछ इस से लाभ पहुँचा। इतना ही नहीं हुआ किन्तु उपनिषदों के अवलोकन से मुझे पता लग गया कि मनुष्य किस प्रकार अपने अन्दर की दबी हुई शक्तियों को उभार कर उन से काम ले सकता है मेरे विद्या गुरु मेरे बाप ही थे। मैंने अपनी तीव्र बुद्धि से असलियत को समझ लिया और उसका अभ्यास करने लगी। थोड़े दिन में अनुभव होने लगा कि किस प्रकार अभ्यासी अपने अभ्यास की सहायता से दूसरों पर अपना प्रभाव डालकर उन्हें अपना सहायक बना सकता है जिसका उदाहरण तुमने अपनी आँखों से देख लिया। इसमें और कोई बात नहीं है। यह उद्गीत के सुमरन ध्यान और भजन का फल है।"

अब मेरी अवस्था बारह वर्ष की हो गई। दुर्भाग्य से पिता जी ने भी चोला छोड़ दिया। मैं अकेली रह गई। एक सहारा था वह भी हाथ से गया। वह खाट पर मरे हुये पड़े थे। मैं रोती हुई पड़ोसियों के पास गई कि पिता जी का देहांत हो गया आप लोग चल कर उनका कर्म करा दीजिये। ढाढस के शब्द तो किसी के मुख से निकले नहीं सब ने यही कहा—डाइन ने अन्त में बाप को भी नहीं छोड़ा।' कर्म की गति प्रबल होती है। हिन्दुओं से सहानुभूति उठ गई। कोई किसी की बात तक नहीं पूछता। लाश उठाने वाले तक कठिनाई से मिलते हैं। भ्रम और भ्रान्ति ने उन्हें इतना दबोच रक्खा है। कि वह मनुष्यता से बहुत नीचे गिर गये हैं! प्रत्येक मनुष्य स्वार्थ साधन का रूप बना हुआ है। मेरे अतिरिक्त कौन समझ सकता है कि बाप की लाश किस प्रकार गंगा के तट पर पहुंचाई गई और मैं ने किस प्रकार अपने हाथों से उनका दग्ध संस्कार किया!'

लाश जलाकर मैं घर आई। अकेली लड़की से क्या हो सकता है! न उनका दसवां हुआ न तेरहवीं मनाई गई। कोई मेरे घर नहीं आता। मैं अकेली पड़ी हुई रोया करती थी। यदि कहीं संयोगवश बाहर निकली स्त्रियाँ और लड़के मुझे देखते ही भाग जाते थे और पुरुष बुरा भला सुनाते थे। न खाने का ठिकाना न पीने का प्रबन्ध। मेरा कोई हाल तक नहीं पूछता था। बाप के पास कुछ खेत थे। वही जीविका थी। अब खेती कौन करे! मरते देर नहीं हुई कि पट्टी दारों ने खेत पर अपना अधिकार जमा लिया।'

'कई दिन इसी प्रकार बीत गये। एक दिन मन में सोचा 'इस प्रकार जीवन व्यतीत करना ठीक नहीं है। गायत्री! तू मनुष्य है। उपनिषदों ने मनुष्य को पूर्ण और सर्व श्रेष्ठ बत-

लाया है। घर से बाहर निकल यदि मनुष्य जाति में सहानुभूति नहीं है तो चल कर जंगली पशुओं के साथ रह। सोच विचार में एक आध दिन लग गये। मैं बारह वर्ष की अवस्था में घर से बाहर निकल खड़ी हुई, विरनई के नाले में पहुँची जहाँ डर के मारे भोले भाले हिन्दू जाते तक नहीं थे। वहाँ मैं ने एक विचित्र दृश्य देखा। मैं ने देखा कि एक साधू गुफा की राह से अन्दर की ओर जा रहा था। मैं तो जान पर खेलने के लिये निकली थी। आव देखा न ताव गुफा में घुस गई। कुछ दूर जाने पर फैली हुई जगह मिली। आग जल रही थी। उसके प्रकाश में मैं ने उसी साधु को आसन जमाये हुये बैठे देखा। उसने मुझे देख कर पूछा—'बेटी! तू कौन है!' मैं हाथ बाँध कर उसके पाँव पर गिरी और रो रो कर अपना हाल कह सुनाया। उसे दया आई। मैं कई दिन उसके पास रही। वह गुफा के बाहर पानी लाने के अतिरिक्त बहुत कम निकलता था। सूअर भेड़िये और बन्दर उसे फल फूल और जड़ी बूटी लाकर दे जाते थे। यही उसका आहार था। वह कभी सूअर की पीठ पर चढ़ कर तालाब में कमण्डल भरने जाया करता था। मैं भी उसके साथ कई दिन इसी तरह गई! उसने केवल दृष्टि साधन से इनके वश में लाने का भेद मुझे समझाया। मेरा यह अभ्यास बढ़ गया। साधू ने एक दिन मुझसे कहा—'बेटी! मैं ने स्त्रियों से अलग रहने का व्रत धारण कर रक्खा है। तू दुखी थी और साथ ही अधिकारी भी थी। इसलिये मैंने तुझे अपने पास से नहीं हटाया। अब तू पशुओं के साथ रह सकती है। मैं ने गायत्री के द्वारा योग में पूर्णता प्राप्त करने की विधि भी तुझे बतादी है। देखना! यह विद्या अन अधिकारियों के हाथ में न जाने पाये। अब मैं यहाँ से जाता हूँ। यह जगह तेरे रहने की है। उस समय तक यहां रहना जब तक तेरा

कोई सच्चा ग्राहक न आये। तुझे ब्रह्मचारिणी रहने की आज्ञा नहीं है। इसमें गिरावट का भय है। मैं तुझे आज्ञा दिये जाता हूँ कि यदि कोई अधिकारी मिले तो उसे यह साधन बता दिया करना। यह साधू मेरा सत्गुरु और आत्मिक गुरु है जिससे मैंने पूरा विद्या का रहस्य साखा है।"

इस प्रकार दो वर्ष यहाँ बीत गये। कपड़े लत्ते फट गये। मैं अवधूतिनी के भेष में नंगी रहने लगी। मुसहरों को गुरू की खोज हुई। वह अधिकारी थे। मैं ने उनको दीक्षा दी और सत्संग कराकर उनका भ्रम दूर कराया। इसी बीच में नरसिंह भान जी किसी योगी की खोज में यहाँ आने जाने लगे। वह मुझसे मिले। उनके हृदय में मेरा प्रेम था। इस लिये मैंने गुरु की आज्ञानुसार उन्हें अपना पति बना लिया वरन् इसकी भी आवश्यकता न थी। जो लोग गुरु की आज्ञा नहीं मानते और न उनके बचन पर विश्वास रखते हैं उनको भूल कर भी सिद्धि शक्ति की आशा नहीं रखनी चाहिये।"

"मेरे बाप ने कहा था कि ब्राह्मणी के बदले यदि तू मुसहरनी होती तो अच्छा था फिर इस प्रकार आपत्ति में न फँसती। बात सच्ची थी। मैं यहाँ भी बाप की इच्छानुसार मुसहरनी बन गई।"

"ऐ ब्राह्मण भाइयो! तुम ने क्या अंधेर मचा रक्खा है! लड़कियाँ बेचते हो। तीन तीन महीने की लड़कियों का विवाह पत्तल पर रख कर कराते हो। दो दो तीन तीन चार चार पाँच पाँच साल की लड़कियों का गठ बन्धन पचास पचास और साठ साठ वर्ष के बूढ़ों के साथ कराते हो। पति के मर जाने पर उन्हें या तो घर से बाहर निकाल देते हो या तीर्थों में पंडों के घर छोड़ आते हो। विधवाओं से सारा जिला भरा पड़ा है गर्भपात कराया जाता है बच्चे मारे जाते हैं। माना

कि हाकिम और कानून को पता नहीं लगता परन्तु क्या ईश्वर भी अंधा है जो इस बात को न जानता हो ! यदि तुम में साहस है तो मेरी बातों को असत्य ठहराओ । क्या इस भदोही से जवान जवान विधवाओं भाग कर और जगहों को नहीं चली जारही हैं । क्या कन्या बेचने वाले ब्राह्मण और जातियों की लड़कियाँ ला ला कर ब्राह्मणों के साथ ब्राह्मणी बना कर नहीं बेच रहे हैं । अत्याचार की हद हो चुकी ! मैं हाथ बाँध कर तुम से प्रार्थना करती हूँ । कि रस्मों के दूर करने का प्रयत्न करो । ऐसा अनुचित काम न होने पाये, मैंही अकेली ब्राह्मणी नहीं थी ! जो इस आपत्ति में फंसी । मेरी जैसी हजारों बहिनें हैं जो रक्त के आँसू रोती हैं । तुम लोगों को उन बेचारियों पर दया नहीं आती शास्त्रों ने कहीं भी विधवाओं के विवाह का निषेध नहीं किया है । पाराशर स्मृति ने शब्दों में आज्ञा दी है कि यदि पति दुबेल, बूढ़ा, लापता अथवा असाध्य रोगों से पीड़ित हो तो ऐसी अवस्था में स्त्री अपना दूसरा विवाह कर सकती है । विधवाओं का तो कहना ही क्या है ! मैंतो मुसहरनी होगई । मैंने गुरु और बाप की आज्ञानुसार मुसहर के साथ विवाह करके अपने जन्म को बना लिया । औरों पर ईश्वर दया करे ! यदि तुम कुछ कर सकते हो तो करो । और इस यश के भागी बनो ।'

इक्कीसवां अध्याय

नरसिंहमान की राम कहानी

गायत्री की बातों को सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते थे । उसके बचन का गहिरा प्रभाव लोगों के हृदय पर पड़ा । केवल

थोड़े से देहाती ब्राह्मण ही ऐसे थे जिन्हें उसकी बातों से घृणा हुई वरन् बहुत से पढ़े लिखे ब्राह्मणों की आँखों से आँसू बहने लगे।

गायत्री के बैठते ही नरसिंहमान उठा और कहने लगा:—

"भाइयों! आप ने मेरी स्त्री की कहानी सुन ली। अब मेरी भी राम कहानी सुनिये! मेरी अवस्था चौबीस वर्ष की है परन्तु मैं उसी समय से इसे प्यार करता हूं जब से यह विधवा हो गई है। यह प्रेम किसी नीच भाव के साथ नहीं था किन्तु शुद्ध और आत्मिक था। जिस समय गायत्री बेवा हुई मैं बनारस की संस्कृत पाठशाला में पढ़ रहा था। छुट्टी के दिनों में घर आया। जब सुना कि गायत्री बेवा हो गई मुझे बहुत दुख हुआ। उस समय मैं पन्द्रह वर्ष का था। मैं उसके बाप के पास गया। गायत्री खेल रही थी। मैं ने उसे गोद में उठा लिया। उसका बाप तो मुझे देखते ही रो पड़ा। इसे गोद में लिये हुये मैं पद्मकान्त से बात चीत करने लगा। उसने कहा—'इसकी माँ बचपन ही में चल बसी थी। मैंने इसे पाला पोषा और तीन वर्ष का किया। इसी साल इसका विवाह हुआ और अभी दो चार महीने भी नहीं होने पाये थे कि यह बेवा होगई। जबतक मैं जीता हूँ इसे अपने पास रक्खूँगा। दुख इस बात का है। कि मेरे पीछे कौन इसकी सुध लेगा?" मैं ने उत्तर दिया 'आप चिन्ता न करें। मै इसका पालन पोषण उचित रीति से करता रहूंगा। मेरा सलूक ऐसा होगा कि यह माँ बाप और पति के वियोग को भूल जायगी। पद्मा कान्त को मेरी बातों पर विश्वास नहीं आया और आता कैसे ब्राह्मणों की दशा इस देश में बड़ी ही सोचनीय हो रही है। उसने सोच समझ कर कहा—'यह अभी पूरे चार वर्ष की भी नहीं है। लोग इसे डाइन कहते हैं। जिसने जन्म लेते ही माँ

को खा लिया और अभी पति का मुँह नहीं देखा था कि उसे भी चट कर गई। अब एक बाप रह गया है। पता नहीं उसके पीछे किस पर हाथ फेरेगी।' ऐसी दशा में मैं कैसे मानूँ कि तुम्हारे माँ बाप इसे तुम्हारे साथ रहने देंगे। मैं ने बहुत कुछ समझाया बुझाया और यहाँ तक कहा कि चाहे ज़मीन आसमान पलट जाये मैं गायत्री का साथ दूँगा। इसके आराम के ध्यान से मैं अपना विवाह तक न करूँगा और जीवन पर्य्यन्त कुँवारा ही रहूंगा।'

बात आई और गई। इधर वह संस्कृत पढ़ाने लगा। और इधर मैं भी पाठशाला में पढ़ता रहा। जब कभी छुट्टी के दिनों में आता गायत्री और उसके बाप से मुझे निश्चय हो गया कि गायत्री मनुष्य के रूप में अनमोल रत्न हैं और मुझ से कहीं बढ़ कर समझदार है। इसने नव वर्ष में संस्कृत भाषा का पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त कर लिया। मैं चकित था। उतने ही दिनों में मैं ने प्रथमा, मध्यमा, शास्त्री और आचार्य्य परीक्षा में सफलता प्राप्त करली। जब मैं बनारस से अन्तिम बार आया इसका बाप मर चुका था और वह लापता होगई थी। खोजा लोगों से पूछा देखी की परन्तु किसी ने सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया। इसके चले जाने और लापता होने से लोग प्रसन्न थे कि डाइन से गाँव का पीछा छूटा। मेरी दशा इसके विरुद्ध थी। मेरे दिल को ठेस लगी और उदास रहने लगा। माँ बाप ने मेरा विवाह करना चाहा परन्तु उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई क्योंकि उनके पास बहुत रुपया नहीं था और वह लड़की नहीं मोल ले सकते थे मैं ब्राह्मण था और संस्कृत का पूरा पंडित समझा जाता था। फिर भी मेरी कोई हैसियत नहीं समझी जाती थी। इसी पूरा क़ानूनगोयान में हमारे कायस्थ पड़ोसी हैं जिनके लड़के जब बी. ए एम. ए. पास हो

जाते हैं तो उनका केवल अच्छे घरों में विवाह हो जाता है किन्तु दहेज में हजारों रुपये हाथ आते हैं। अन्त में मेरे मां बाप ने यह सम्मति दी कि तुम कहीं किसी स्कूल में नौकरी कर लो और हम रुपया इकट्ठा करके अपना विवाह आप करो मैं हँसा— मैं ऐसी जाति में विवाह करना नहीं चाहता जो लड़कियाँ बेचा करते हैं। वह चुप हो रहे और मेरे विवाह की ओर से निराश होकर कुछ दिनों पीछे संसार से चल बसे और मुझे भी गायत्री की तरह अकेला छोड़ गये। भेद इतना ही था। कि वह लड़की थी और मैं लड़का था। गायत्री के बाप के खेत को उसके पट्टीदारों ने छीन लिया। मैं अपने बाप का जायदाद का वारिस हूँ यह दो वर्ष मेरे किस प्रकार बीते वह मेरा ही दिल जानता है। रात दिन यही ध्यान रहता था कि गायत्री मुझे मिल जाय और मैं अपनी प्रतिज्ञानुसार उसकी सेवा करूँ परन्तु यह आशा पूरी नहीं हुई! इन्हीं दिनों मुसहरों को जाति सुधार का ध्यान आया। मुझे इनके साथ सहानुभूति तो थी परन्तु साहस नहीं था कि मैं उनका साथ देता ब्राह्मण मुसहरों को अशुद्ध अपवित्र और अछूत समझते हैं क्या मजाल की वह उनके घरों में तो आजाँय लोग इनकी परछाई से भी कतराते और दूर भागते हैं।'

मैं बनारस में रह चुका था। वहाँ से बहुत से हिन्दू ईसाई और मुसलमान हो जाया करते थे। धर्म छोड़ने से इनकी दशा बदल जाती थी और वही हिन्दू जो छोटी जातियों को हिन्दू रहते समय अछूत और घृणित समझते थे ईसाई और मुसलमान हो जाने पर उन्हें साहेब और खाँ साहेब कहा करते थे। हाथ मिलाते और अपने साथ फर्श पर या कुर्सियों पर बिठाया करते थे मैं सोचा करता था कि हिन्दू होना धर्म है या अधर्म जिस धर्म में रहने से मनुष्य नीचा और पद्दलित रहता

है और उसके छोड़ देने से प्रतिष्ठित और माननीय समझा जाता है उसे धर्म कहना भूल ही नहीं किन्तु अन्याय है। वह तो जो होगा अधर्म ही होगा परन्तु मैं ऐसे समाज में रहता था कि जिसमें ऐसे मनुष्यों पर बात चीत करना भी पाप समझा जाता है।

"यह दशा कुछ दिनों तक रही। फिर सुनने में आया कि मुसहरों को गुरु मिल गया है और वह सिद्ध पुरुष है! कई ब्राह्मणों ने उसका दर्शन भी रात के समय किया परन्तु लाभ उठाने के बदले व्यर्थ ही लड़ाई मोल लेली। फिर उन्हें अपनी भूल का पता लगा। योगी लापता हो चुका था। कई ब्राह्मण ढूँढने निकले। वह उनके हाथ नहीं लगा। मैंने उसको खोज का बीड़ा उठाया क्योंकि संसार मेरे लिये दुखदाई हो रहा था और मुझे आत्मिक शान्ति की बहुत बड़ी आवश्यकता थी। कई दिन मारा मारा विरनई के नाले में खोजता फिरा। अंत में उसका दर्शन हो ही गया और वह योगी वही गायत्री निकला।"

गायत्री ने बहुत प्रार्थना करने पर मुझे साथ रहने की आज्ञा दी। वह एक दम नंगी रहा करती थी। जब मैंने उसकी सारी बातें मान ली तब आने जाने की आज्ञा मिली। आप जानते हैं। मैं आचार्य परीक्षा पास हूँ और संस्कृत भाषा का विद्वान समझा जाता हूँ परन्तु इस लड़की ने अपने अनुभव से मुझे एक दम मूर्ख ही सिद्ध कर दिखाया। जो बात कहती थी अद्वितीय और सच्ची कहती थी। उसने संस्कृत भाषा की परिभाषाओं को एक दम नया रंग रूप दिया और उनके नये नये अर्थ निकाले जैसे उसने मुझे बताया--ब्रह्म शब्द दो धातुओं से निकला है (ब्रह=बढ़ना) और (मनिन=सोचना)। इस दृष्टि से 'ब्रह्म' का जो अर्थ साधारण दृष्टि से लिया

जाता है वह असत्य और मन गढ़न्त है-'आत्मा' दो धातुओं से निकला है (अत=हरकत) और (मनिन=सोचना)। इस लिये आत्मा का अर्थ केवल इतना ही कि जिसमें हरकत और सोचने का गुण हो। 'माया' दो धातुओं से मिलकर बना है (मा=मापना) और (या = यन्त्र)। यह माया बुद्धि के अतिरिक और कुछ नहीं है। मैं उसकी बातों को सुन कर दंग रह गया और मेरी सारी पंडिताई धूल में मिल गई अहंकार का सर कुचला गया। उसने समझाया कि उपासना का अर्थ (उप=पास) और (आसन=बैठना) है। गुरु के पास और उसके सतसंग में बैठना ही सच्ची उपासना है। और जो कुछ अर्थ समझाया बुझाया जाता है वह ढकोसला ही ढकोसला है इसी प्रकार उसने सारे शब्दों के अर्थ उलट पलट दिये और मुझे समझाया कि हिन्दू जो धर्म कर्म के विषय में समझ बैठे हैं वह एक दम उलटा है। यदि कभी अवसर मिला तो उनको असलियत की सूझ सुझाने का यत्न किया जायगा।"

मैं ने उसके थोड़े दिनों के सत्संग से बहुत कुछ लाभ उठाया है और अन्त में उसने उपनिषदों के अनुसार मुझे गायत्री मन्त्र का सच्चा अर्थ और साधन बताकर अपना चेला बना लिया। मैं उसकी संगत को ईश्वर की दया समझता हूँ। इसका वश चलता तो यह मुझे चेला बनाने और अभ्यास कराने के पश्चात् मुझे अपने से अलग कर देती परन्तु मेरे सौभाग्य से उसे अपने गुरू के अन्तिम आज्ञापालन का ध्यान था। इसलिये मुसहरों से सम्मति लेने के पीछे गायत्री ने मुझ से विवाह करना स्वीकार कर लिया। अब हम स्त्री पुरुष की हैसियत में रहते हैं जिसे आप जानते हैं। मेरी स्त्री गायत्री है मेरा विवाह गायत्री अर्थात् तीन तरह के गाने के साथ हुआ है जिसके तीन स्वर शारीरिक, मानसिक और आत्मिक है।

मैं प्रसन्न चित्त हूँ। उद्गीत गाता फिरता हूँ। गायत्री और सावित्री का असली रूप और आदर्श मेरी आँखों के सामने बराबर रहता है। इस देवी ने मुझे मनुष्य बनाया और मैं ने अपना नर जन्म सुफल कर लिया।

यह मेरी राम कहानी है।